विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
भूमिका	१
पहला अध्याय	
(परिभाषा)	
छन्दों की उपयोगिता	५
छन्दों का लक्षण	८
मात्रा	८
वर्ण	९
क्रम	१०
यति	१०
गति	११
पाद	१३
गुरु का लक्षण	१३
लघु का लक्षण	१६
छन्द के भेद	१८
वर्णिक गण	१८
मात्रिक गण	२२
मात्रिक और वर्णिक छन्द पहचानने की रीति	२५
छन्दों में मात्रा और गण लगाने की रीति	२६

विषय	पृष्ठ
मात्रिक और वर्णिक छन्दों के भेद तथा उपभेद	२८
दण्डक	३१
दूसरा अध्याय	
(वर्णिक छन्द प्रकरण)	
अनुष्टुभ् जाति	३३
विद्युन्माला	३४
प्रमाणिका	३४
बृहती जाति	३५
भुजगशिशुभृता	३५
पंक्ति जाति	३५
चम्पक माला	३५
त्रिष्टुप् जाति	३६
शालिनी	३६
दोधक	३६
स्वागता	३७
रथोद्धता	३८
भुजंगी	३८
इन्दिरा	३९
इन्द्रवज्रा	४०
उपेन्द्रवज्रा	४१

उपजाति
जगती जाति
भुजंगप्रयात
प्रमिताक्षरा
द्रुतविलंवित
मोदक
तोटक
स्रग्विणी
इन्द्रवंशा
वंशस्थ
माधव
मोतियदाम
जलोद्धतगति
अतिजगती जाति
तारक
मञ्जुभाषिणी
राधा
शक्वरी जाति
बसंततिलका
मुकुन्द
अतिशक्वरी जाति
मालिनी
चामर
निशिपालिका
अष्टि जाति
पञ्चचामर
चञ्चला

४२ अत्यष्टि जाति
४३ मन्दाक्रान्ता
४३ शिखरिणी
४३ पृथ्वी
४४ धृति जाति
४५ चञ्चरी
४६ अतिधृति जाति
४७ शार्दूलविक्रीडित
४८ कृति जाति
४८ गीतिका
४९ प्रकृति जाति
५० स्रग्धरा
५१ आकृति जाति
५१ मदिरा
५१ मत्तगयन्द
५२ संस्कृति जाति
५२ दुर्मिल (चन्द्रकला)
५३ किरीट
५३ अतिकृती जाति
५५ सुन्दरी
५६ उत्कृति जाति
५६ कुन्दलता
५८ वर्णदण्डक प्रकरण
५९ चण्डवृष्टि प्रपात
६० मत्तमातङ्गलीलाकरम्
६० कुसुमस्तवक
६२ मुक्तक दण्डक

६३
६३
६४
६६
६७
६७
६८
६८
६९
६९
७०
७०
७१
७१
७२
७४
७४
७६
७७
७७
७८
७८
७८
७९
७९
७९
८०

घनाक्षरी ८०
रूपघनाक्षरी ८२
जलहरण ८३
देवघनाक्षरी ८४
अर्धसमवृत्त प्रकरण ८५
अपरवक्त्र ८५
सुन्दरी ८५
मंजुमाधवी ८५
विषमवृत्त प्रकरण ८६
सौरभक ८६
आपीड़ ८७
मिलिंदपाद ८७
भुजंगप्रयात मिलिंदपाद ८८
पञ्चचामर मिलिंदपाद ८८

तीसरा अध्याय

जाति

रौद्र जाति ८८
अहीर ८८
आदित्य जाति ९०
तोमर ९०
भागवत जाति ९०
उल्लाला (अन्य नाम चन्द्रमणि) ९०
मानव जाति ९१
सखि ९१
हाकलि ९३
विजात (अन्यनाम प्रतिभा) ९५
तैथिक ९६
चौबोला (अन्य नाम हंसी) ९६
गुपाल ९७
जयकरी (अन्य नाम चौपई) ९८
संस्कारी जाति ९८
चौपाई ९८
पादाकुलक १००
पादाकुलक और चौपाई में अन्तर १०१
पद्धरि १०१
मत्तसमक १०२
पदपादाकुलक १०२
पदपादाकुलक और चौपाई में अन्तर १०३
शृंगार (अन्य नाम प्रसाद) १०३
महासंस्कारी जाति १०४
धीर १०५
चन्द्र १०६
पौराणिक छन्द १०६
शक्ति १०६
महापौराणिक छन्द १०७
सुमेरु १०७
पीयूष वर्ष १०८
महादैशिक छन्द १०९
हंसगति १०९
त्रैलोक जाति ११०
चान्द्रायण ११०

महारौद्र ... १११
कुण्डल ... ,,
राधिका ... ,,
बिहारी ... ११२
रौद्रार्क जाति ... ,,
उपमान ... ,,
अवतारी ... ११३
रोला ... ,,
दिक्पाल ... ,,
रूपमाला ... ११४
महावतारी जाति ... ११५
मुक्तामणि ... ,,
महाभागवत जाति ... ,,
गीतिका ... ,,
नाक्षत्रिक जाति ... ११७
सरसी (अन्य नाम कबीर) ... ,,
यौगिक जाति ... ११८
हरिगीतिका ... ,,
सार ... ११९
विधाता ... १२०
महायौगिक जाति ... ,,
मरहटा ... ,,
महातैथिक जाति ... १२१
चवपैया ... ,,
ताटङ्क ... १२२
लावनी
अश्वावतारी जाति
वीर (अन्य नाम आल्हा)
लाक्षणिक जाति
त्रिभंगी
मात्रा दण्डक प्रकरण
करखा
विजया
हरिप्रिया
अर्धसम मात्रिक छन्द प्रकर
बरवै
अतिबरवै
दोहा
सोरठा
उल्लाल
रुचिरा (द्वितीय)
मात्रिक विषम छन्द प्रकरण
कुण्डलिया
छप्पय
मात्रिक मिलिंदपाद
शृंगार मिलिंदपाद
आर्या
गीति
उपगीति आदि अन्य मुख्य मे

चौथा अध्याय

(उभय छन्द तथा मुक्त छन्द प्रकरण)

उभय छन्द	१३९
मुक्त या स्वच्छन्द छन्द	१४१
मुक्त छन्द के दो भेदों की आलोचना	१४२

पाँचवाँ अध्याय

(दग्धाक्षर, शुभाशुभगण तथा तुक प्रकरण)

दग्धाक्षर	१४४
अपवाद	१४४
शुभ और अशुभ गण	१४५
गणों के देवता और फल	१४७
तुक	१४८

छठा अध्याय

(प्रत्यय प्रकरण)

प्रत्यय	१४९
संख्या प्रत्यय	१४९
प्रस्तार प्रत्यय	१५१
नष्ट प्रत्यय	१५८
उद्दिष्ट प्रत्यय	१६२
परिशिष्ट १ (छन्द ज्ञानोपयोगी प्रश्न)	१६४
परिशिष्ट २ (उत्तर)	१७३

स० स्वरूप सिंह सग्गू बी. ए. एल एस बी. ने
जनता प्रैस टांडा रोड, जालन्धर शहर में छापी।

भिखारीदास कृत	छन्दार्णव
,,	छन्दप्रकाश
पद्माकर भट्ट कृत	छन्दमंजरी
चलवीर कृत	पिंगल मनहरण
कुँवर गोपाल भट्ट कृत	पिंगल प्रकाश
रसपुञ्जदास कृत	वृत्तविनोद
गोपाल भट्ट कृत	पिंगल प्रकरण
व्रजलाल भट्ट कृत	छन्दरत्नाकर
कलानिधि कृत	वृत्तचन्द्रिका

ये ग्रन्थ पुराने हैं। इनका अब प्रचार नहीं रहा। निम्नलि पुस्तकें छन्द के विषय पर नवीन ढंग से लिखी हुई हैं—

जगन्नाथप्रसाद भानु कृत	छन्दःप्रभाकर
अवध उपाध्याय कृत	नवीन पिंगल
पुत्तनलाल कृत	सरल पिंगल
रामनरेश त्रिपाठी कृत	हिन्दी पद्य-रचना
राजाराम शास्त्री कृत	छन्दरत्नावली
महामहोपाध्याय पं० परमेश्वरानन्द शास्त्री कृत	छन्दःशिक्षा
परमानन्द शास्त्री कृत	पिंगल पीयूष

इसके अतिरिक्त अलंकार ग्रन्थों के परिशिष्ट के रूप में भी बहुत से विद्वानों ने छन्द के विषय का दिग्दर्शन करवाय जो अपने-अपने ढंग पर बहुत अच्छा है; उदाहरण के । रघुनन्दन शास्त्री कृत अलंकार-प्रवेशिका का छन्दःपरि श्रीरामबहोरी कृत काव्य-प्रदीप का पिंगल-परिचय।

अब प्रश्न हो सकता है कि इतने ग्रन्थों के होते हुए मैंने उसी विषय पर एक नया ग्रन्थ क्यों लिखा? उत्तर सरल है। एक ही विषय को प्रतिपादित करने का ढंग सबका अपना-अपना हो सकता है। यह भी सम्भव है कि इस विषय की अन्य पुस्तकों में जो-जो त्रुटियाँ लेखक को दिखलाई दीं, वे इस पुस्तक में न आ पाई हों। जो पुस्तक जितनी ही बोधगम्य, सुलझी हुई, पाठक के हृदय में उठने वाली शंकाओं का आप-से-आप निराकरण करने वाली होगी, इस संघर्षमय जगत् में उतनी ही वह चिरजीवी बन सकेगी—यही विचार इस पुस्तक के जन्म का कारण हुआ। समय ही बतलाएगा कि इस पुस्तक से कुछ लाभ हुआ या नहीं।

इस पुस्तक में प्रयत्न किया गया है कि उदाहरणों में वही पद्य दिये जायँ जिनमें छन्दों का लक्षण ठीक-ठाक घट जाए। टिप्पणियाँ देकर, जैसे कि इस विषय की पुस्तकों में बहुधा पाया जाता है, 'इसे गुरु पढ़ो या लघु पढ़ो' नहीं लिखा। हाँ, जहाँ ऐसे किए बिना काम चलता ही न था, वहाँ ऐसा भी किया गया है, किन्तु बहुत कम स्थानों पर। बात यह है कि हिन्दी के छन्दों में संयुक्ताक्षर से पूर्व का अक्षर संस्कृत की तरह सब जगह गुरु नहीं होता, क्योंकि उच्चारण में हम उसे जोर देकर नहीं बोलते। राम प्रसाद को हम संस्कृतभाषी की तरह रामप्प्रसाद नहीं कहते, रामप्रसाद कहते हैं। नियम के अनुसार म गुरु होना चाहिए, पर होता नहीं। छात्रों को भ्रम न हो जाय अतः यह बात टिप्पणी में स्पष्ट करनी पड़ती है। परिणामतः इस विषय की टिप्पणियों की संख्या बढ़ जाती है।

छन्दों के कुछ लक्षण, जो उन्हीं छन्दों के उदाहरण भी बन सकें, लेखक के अपने बनाये हुए हैं, जैसे १८ मात्रा वाले शक्ति छन्द, १९ मात्रा वाले सुमेरु तथा पीयूषवर्ण छन्दों के लक्षण। ऐसे ही कुछ

ओ३म्

हिंदी-छंद-रचना

पहला अध्याय

परिभाषा-प्रकरण

छन्दों की उपयोगिता

यह ठीक है कि कविता के लिए छन्दोमयी रचना होना आवश्यक नहीं, पर यह भी ठीक है कि कविता छन्द के नियमों में व्यवस्थित होकर अधिक आकर्षक बन जाती है। गद्य में कही हुई एक चमत्कारपूर्ण बात को यदि हम दो बार दुहराते हैं तो पद्य में कही हुई उसी बात को हम चार बार दुहराना चाहेंगे। जिस प्रकार अपने शरीर पर फबने वाले वस्त्र पहनने से मनुष्य का सौन्दर्य निखर उठता है, वैसे ही प्रसंगानुसार भिन्न-भिन्न छन्दों का प्रयोग करने से कविता का प्रभाव बढ़ जाता है। न केवल तात्कालिक प्रभाव ही बढ़ता है, प्रत्युत ऐसी कविता की आयु भी बढ़ जाती है। यही कारण है कि छन्दों में बँधी हुई कहावतें साधारण जनता में बरसों से प्रयुक्त होती चली आ रही हैं।

कुछ लोगों का यह भी अनुभव है कि गद्यमयी रचना को कंठस्थ करने की अपेक्षा पद्यमयी रचना को कंठस्थ कर लेना अधिक सुगम है। इसलिए भी लोग पद्य को अधिक पसंद करते हैं।

यह कहना कि छन्दों के बन्धन में पड़कर कविता कुण्ठित हो जाती है—कवि अपनी इच्छा के अनुसार अपने भावों को व्यक्त

नहीं कर सकता—कुछ जँचता नहीं। वाल्मीकि और कालिदास आदि कवियों ने इन्हीं बन्धनों में रहकर ऐसे सुन्दर काव्य प्रदान किये हैं जिनका सम्मान संसार के तमाम साहित्यिक करते हैं। उन्होंने कदाचित् कभी यह प्रकट नहीं किया कि उत्कृष्ट भावों की व्यक्ति के लिए छन्द उनके लिए बाधक बनते हैं। जो लोग छन्दोबद्ध रचना को त्यागकर स्वच्छन्द रचना करने के पक्ष में यह कहकर सम्मति देते हैं कि छन्दों के बन्धन में पड़कर कवि के भाव-प्रवाह की अभिव्यक्ति में बाधा पड़ती है, उनकी बात हम तभी मान सकते हैं जब हम यह स्वीकार कर लें कि जिन लोगों ने छन्दोबद्ध रचनाएँ की हैं उनमें भाव-प्रवाह की कमी है। वाल्मीकि और कालिदास-जैसे कवियों की रचना के जीवित रहते हुए ऐसा कौन कहेगा ?

छन्दों का लक्षण

जिस रचना में मात्रा-संख्या, वर्ण-संख्या तथा इनके विशेष क्रम का और यति तथा गति के नियम का पालन करके पाद बनाए जायँ उसे छन्द कहा जाता है।

इस लक्षण में मात्रा, वर्ण, क्रम, यति, गति और पाद ये छः पारिभाषिक शब्द आए हैं जो कि छन्दःशास्त्र के अपने हैं। पहले इन्हें समझ लेना चाहिए।

मात्रा :—

किसी ध्वनि के उच्चारण करने में जो काल व्यतीत होता है उस काल को मात्रा कहा जाता है। जब हम 'अ' का उच्चारण करते हैं तब हम एक मात्रा का प्रयोग करते हैं और जब 'आ' का उच्चारण करते हैं तब दो मात्राओं का। इस तरह अ इ उ ऋ आदि स्वर एक मात्रा वाले हैं, तथा आ ई ऊ ॠ आदि स्वर दो मात्रा वाले हैं। साधारण भाषा में इन्हें क्रमशः ह्रस्व और दीर्घ कह दिया जाता है।

छन्दःशास्त्र में मात्राओं की गिनती करते समय केवल स्वरों की ही मात्राओं को गिना जाता है, व्यंजनों पर ध्यान नहीं दिया जाता। व्यंजनों के साथ जो स्वर जुड़े हुए हैं उनकी मात्राएँ गिन ली जाती हैं, स्वर रहित व्यंजन छोड़ दिया जाता है। उदाहरण के लिए, 'रघुवर' में (र्+अ+घ्+उ+व्+अ+र्+अ) चार मात्राएँ ली जायँगी, 'सीतापति' में (स्+ई+त्+आ+प्+अ+त्+इ) छः और 'कदाचित्' में (क+अ+द्+आ+च्+इ+त्) चार। 'कदाचित्' में त् क्योंकि स्वररहित व्यंजन है अतः उसकी मात्रा कोई नहीं है। हाँ, यदि ह्रस्व अक्षर के आगे म् व्यंजन पड़ा है तो उसके पूर्व का अक्षर दीर्घ मान लिया जाता है, क्योंकि म् का अनुस्वार बन जाता है और अनुस्वार-युक्त व्यंजन दीर्घ होता है। इस विषय की विशेष जानकारी के लिए आगे गुरु अक्षर का लक्षण देखिए।

वर्ण—

वर्ण का अर्थ है अक्षर जो एक पूरा उच्चारण होता है। अकेला स्वर भी एक पूरा अक्षर होता है और व्यंजनों से मिलकर भी स्वर अक्षर होता है। वर्णों की गिनती करते समय स्वरसहित ही व्यंजन गिने जाते हैं। स्वरहीन व्यंजन चाहे कितने हों, छन्दःशास्त्र में उनकी गिनती नहीं होती। स्वास्थ्य में यद्यपि स्+व्+आ+स्+थ्+य्+अ ५ व्यंजन हैं पर क्योंकि स्वर दो हैं अतः इसके दो ही वर्ण गिने जायँगे। वर्णों की गिनती में मात्राओं को नहीं गिनते। चाहे वर्ण ह्रस्व हो चाहे दीर्घ हो, वह एक ही गिना जायगा। 'चाचा' में दो वर्ण हैं और 'सच' में भी दो वर्ण हैं। इसी तरह मौर्व्य में भी दो ही वर्ण हैं। 'भारतोदय हो गया' में वर्ण-संख्या आठ है और मात्रा-संख्या बारह है।

क्रम—

पाद के किस स्थान पर वर्ण ह्रस्व रखना है और किस स्थान पर दीर्घ रखना है इस स्थान-सम्बन्धी नियम को क्रम कहते हैं। कहीं-कहीं मात्रिक छन्द में भी मात्राओं का क्रम रक्खा जाता है। पाद के आरम्भ में ३ मात्राएँ हों, फिर दो हों तथा अन्त में दीर्घ और ह्रस्व मात्राएँ हों इत्यादि, मात्रा-क्रम कहलाता है। पर वहाँ ह्रस्व और दीर्घ अक्षर रखने की आवश्यकता नहीं होती।

वर्ण-क्रम का उदाहरण देखिए—

धरणीश धनेश जनेश रहा।

इस पाद में बारह वर्ण हैं और इनका क्रम यों है—पहला-दूसरा ह्रस्व, तीसरा दीर्घ, चौथा-पाँचवाँ ह्रस्व, छठा दीर्घ, सातवाँ-आठवाँ ह्रस्व और नौवाँ दीर्घ, दसवाँ-ग्यारहवाँ ह्रस्व और बारहवाँ दीर्घ।

मात्राक्रम का उदाहरण देखिए—

पुनि भानुकुल भूषण सकल सनमान विधि समधी किये।

इस पाद में अट्ठाईस मात्राएँ हैं जिनका क्रम इस प्रकार है—

पुनि। भानु। कुलभू। षणस। कलसन। मान। विधिसम। धीकिये।
२ + ३ + ४ + ३ + ४ + ३ + ४ + ५=२८

यति—

साधारण भाषा में जिसे विश्राम या विराम कहा जाता है उसे छन्दःशास्त्र में यति कहा जाता है। पाद के अन्त में यति अवश्य रक्खी जाती है। जहाँ पाद लम्बे हों वहाँ उनके बीच भी यति रक्खी जाती है ताकि पढ़ने और समझने में सुविधा रहे। एक ही साँस में किसी लम्बी पंक्ति का उच्चारण करना कठिन हो जाता है। पाद के बीच में कहीं एक, कहीं दो और कहीं तीन यतियां होती है। किस

छन्द में कहाँ और कितनी यतियां होती हैं यह बात छन्दों के लक्षणों के साथ बताई जायँगी। यहाँ अभी एक उदाहरण से यति का नियम समझ लेना चाहिए—

जो मैं कोई, विहग उड़ता, देखती व्योम में हूँ।

इस पाद में १७ वर्ण हैं। यह मन्दाक्रान्ता छन्द है। इस छन्द में चौथे, दसवें और सत्रहवें वर्ण पर यति रखने का नियम है, जो कि ठीक-ठीक निभाया गया है। ठीक-ठीक निभाने का मतलब है कि यति पद के मध्य में यहां कहीं नहीं पड़ी, प्रत्युत पूरे पद की समाप्ति पर पड़ी है। जहाँ यति पद के मध्य में पड़े वहाँ यतिभंग दोष माना जाता है, जिस तरह निम्नलिखित पद्य में यह दोष विद्यमान है—

पुनि मन वचन क, रम रघुनायक।

छन्दःशास्त्र की एक पुस्तक में यह पद्यांश १६ मात्रा के डिल्ला नामक मात्रिक छन्द के उदाहरण में दिया गया है। इस छन्द में आठ-आठ मात्राओं पर यति रखने का नियम है। पर ऊपर के पाद में आठवीं मात्रा 'करम' के 'क' पर समाप्त होती है, जिससे पद बीच में से टूट जाता है। इसे यतिभंग दोष कहा जाता है। यतिभंग दोष जहाँ होगा वहाँ कविता के सौन्दर्य में तो न्यूनता आएगी ही साथ ही अर्थ समझने में भी कठिनाई होगी। कहीं कठिनाई न भी हो तो कम-से-कम अर्थ समझने में विलम्ब तो अवश्य होगा ही।

गति—

कभी-कभी ऐसा होता है कि किसी छन्द के पाद में मात्राओं या वर्णों की संख्या पूरी होती है, यति भी यथास्थान होती है फिर भी पढ़ते समय उसमें रुकावट-सी प्रतीत होती है। दूसरे शब्दों में, उस पाद में प्रवाह नहीं होता। इसका कारण उस पाद में गति का अभाव होता है। सिद्ध कवियों की कविता में यह गति विद्यमान रहती है। गति कैसे कहाँ विद्यमान रहती है यह बात किन्हीं नियमों पर आधरित

नहीं। यह बात अभ्यास पर निर्भर करती है। प्रायः ऐसा देखा गया है कि कवि जब भावावेश में होता है—जब कविता पद्यबद्ध रूप से उसके भीतर से बिना किसी प्रयत्न के स्वयं निकलती आती है—तब ऐसी कविता में प्रवाह या गति विद्यमान रहती है। जहाँ अँगुलियों पर गिन-गिनकर मात्रा या वर्ण जोड़े जायँ वहाँ प्रायः गति का अभाव हो जाता है। नीचे के पद्यांशों में देखिए, कितना प्रवाह है—

(क) गति ना सुहात ना सुहात परभात आली।
जब मन लागि जात काहू निरमोही सों॥ (पद्माकर)

(ख) तारा से तरनि धूरि धारा में लगत जिमि।
धारा पर पारा पारावार यों हलत है॥ (भूषण)

पर इस पद्यांश को देखिए जिसमें बेचारी जीभ को लड़खड़ाकर अपना रास्ता तय करना पड़ता है :

ऐसो ऊँचो दुरग महाबली को जामें।
नखतावली सों बहस दीपावलि करत है॥ (भूषण)

इसमें गति का नितान्त अभाव है (यतिभंग दोष तो है ही) ये तीनों उदाहरण ३१ वर्णों के मनहरण छन्द के हैं।

गति का ठीक होना रचयिता के शब्द-चयन की योग्यता पर निर्भर करता है। नीचे के दोहे के एक दल को देखिए —

गोविन्द नाम जाहि में संगीत भलो जान।[1]

यह पढ़ा ठीक नहीं जाता। इसमें गति नहीं। अब इस दल को पढ़िए-

सीता पती न भूलिए, जो लौं घट में प्रान।[1]

इसमें गति है। मात्रा-क्रम दोनों दलों में एक जैसा है, फिर भी पहले में गति नहीं दूसरे में गति है। यदि पहले दल के शब्द यों बदल दिए जायँ तो उस में गति आ जाती है।

गोविन्दहि को नाम जहँ, सोई भलो संगीत।[1]

---

[1] ये उदाहरण छन्दःप्रभाकर से उद्धृत किए गए हैं।

पाद

एक छन्द को आप जितने भागों में विभक्त करें उसके एक भाग को पाद कहा जाता है। प्रायः पाद पद्य के चतुर्थ भाग के अर्थ में समझा जाता है, क्योंकि जितने भी प्रकार के छन्द प्रचलित हैं उनमें से अधिक प्रचार उनका है जिनके चार-चार अंश हैं। अतः एक अंश को पाद कह दिया जाता है। छन्द का परिमाण और सौन्दर्य ठीक रखने के लिए नियम बनाये गए हैं कि अमुक पाद में इतनी मात्राएँ या वर्ण हों और अमुक पाद में इतनी मात्राएँ या वर्ण। जिस छन्द के छः पाद होते हैं उसके छठे अंश को एक पाद कहा जायगा, जैसे कुण्डलिया या छप्पय छन्द में। पाद को चरण भी कहते हैं।

छन्द के लक्षण में जितने पारिभाषिक शब्द प्रयुक्त किये गए थे उन सब की व्याख्या कर दी गई है। इस सम्बन्ध में अब केवल एक बात रह गई है कि जिन वर्णों को हमने ऊपर ह्रस्व या दीर्घ कहा है उनके सम्बन्ध में कुछ विशेष नियम बतला दें। एक वर्ण दीर्घ होते हुए भी कहाँ लघु माना जाता है और कहाँ लघु होते हुए भी दीर्घ माना जाता है ये बातें छन्दों को भली भाँति समझने के लिए आवश्यक हैं। छन्दःशास्त्र में ह्रस्व और दीर्घ शब्दों के लिये लघु और गुरु शब्दों का प्रयोग किया जाता है। इसलिए हम भी अब इन्हीं पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग करेंगे।

गुरु का लक्षण—

(१) आ, ई, ऊ, ॠ, ए, ऐ, ओ, औ, ये स्वर और इनसे मिले हुए व्यंजन गुरु होते हैं। आप, ईंट, ऊँट आदि शब्दों में पहले अक्षर गुरु हैं। ऐक्य, मौढ्य आदि शब्दों में भी प्रथमाक्षर गुरु हैं।

(२) जो वर्ण अनुस्वारयुक्त हों तथा जिनके पीछे विसर्ग लगे हों वे वर्ण भी गुरु माने जाते हैं, जैसे वंश, कंस और हंस आदि तथा

दुःख, प्रातः, अन्तःकरण आदि शब्दों के वं कं, हं, दुः, तः और न
अक्षर गुरु हैं।

यहाँ इस बात को विशेष ध्यान से समझ लेना चाहिए
अनुस्वारयुक्त लघु वर्ण ही दीर्घ होगा। अनुनासिकयुक्त लघु वर्ण दं
नहीं माना जायगा। जो वर्ण मुख और नासिका दोनों स्थानों से बं
जाते हैं वे अनुनासिक होते हैं। लिखने में ऐसे अक्षरों के सिर
चन्द्रबिन्दु लगाया जाता है जैसे हँसना, फँसना आदि शब्द।
शब्दों में ह और फ लघु माने जायँगे। कवि लोग गुरु और लघु
ठीक बैठाने के लिए अनुस्वार की जगह अनुनासिक और अनुनासि
की जगह अनुस्वार रखकर अपना काम चला लिया करते हैं।
ऐसा वहीं करना चाहिए जहाँ उच्चारण में भी स्पष्ट भेद हो। ध्यान
देखने पर अनुस्वार और अनुनासिक के उच्चारण में स्पष्ट भेद दिखल
पड़ता है। नीचे के वाक्यों को देखिए—

मुझे उसकी बात पर हँसी आई।

हंस के वियोग में हंसी इस वर्ष मानसरोवर की त
नहीं उड़ी।

दोनों वाक्यों के रेखांकित शब्दों के उच्चारण में स्पष्ट भेद
अर्थ में भी भेद है। ऐसे स्थानों में छन्द की सुविधा के लिए अनुना
के स्थान पर अनुस्वार रखकर तथा अनुस्वार के स्थान पर अनुना
रखकर गुरु लघु बनाना रुचिकर प्रतीत नहीं होता।

(३) संयुक्त अक्षर के पूर्व का वर्ण यदि लघु हो तो वह भी
माना जाता है। मंतव्य, सत्य घनिष्ठ आदि शब्दों में त, स और
के अक्षर गुरु हैं। बात यह है कि ऐसे शब्दों का उच्चारण करते स
संयुक्त वर्ण के पहले पड़ने वाले वर्ण पर दबाव पड़ता है अतः

बोलने के लिए समय अधिक लगता है जिससे एक मात्रा के स्थान पर उसकी दो मात्राएँ गिनी जाती हैं।

(४) पाद के अन्त में पड़ने वाले लघु अक्षर को भी आवश्यकता होने पर कभी-कभी छन्द की शुद्धि की रक्षा के लिए गुरु मान लिया जाता है और उसे पढ़ते समय थोड़ा लम्बा कर दिया जाता है, जैसे—

इच्छा न मेरी कुछ भी बनूँ मैं,
कुबेर का भी जग में कुबेर।

यह इन्द्रवज्रा छन्द है। इस में ११ वर्ण होते हैं। पादान्त का वर्ण गुरु होता है। पर यहाँ दूसरे चरण में पादांत का 'र' लघु है पर छन्द को शुद्ध रखने के लिए उसे गुरु मान लिया जाता है। पढ़ते समय उसे थोड़ा लम्बा कर दिया जाता है ताकि उस पर इतना समय लग जाय जितना दो मात्राओं के उच्चारण में लगता है।

विशेष

ऊपर बताये हुए तीसरे नियम का एक अपवाद यहाँ समझ लेना चाहिए। संयुक्त अक्षर से पहले आने वाले लघु अक्षर को गुरु वहीं माना जायगा जहाँ लघु वर्ण को खींचकर पढ़ा जायगा अर्थात् उस पर दबाव पड़ेगा। जहाँ ऐसा नहीं होगा वहाँ संयुक्त वर्ण से पहले आने पर भी लघु अक्षर लघु ही रहेगा। उदाहरण के लिए तुम्हारा, कन्हैया, जुन्हैया आदि शब्द लीजिए। इनके तु, क और जु लघु ही माने जाते हैं क्योंकि उच्चारण करते समय इन वर्णों पर किसी प्रकार का भार नहीं पड़ता। लिखने में संयुक्त वर्ण इन शब्दों में अवश्य प्रयुक्त हुए हैं पर बोलने में ये शब्द यों आते हैं तुमारा, कनैया, जुनैया। इसी प्रकार दोहे का यह दल पढ़िए—

चलहु प्रथम यहि ग्राम में, जल ह्रद अति कमनीय।

(छन्दःशिक्षा)

प्रायः ए और ओ अक्षरों के साथ अधिक होती है। उदाहरण देखिए—

(१) गोरस लेहु गोपाल!

(२) देहु देवावहु गारि।

ये दोनों अवतरण भिन्न-भिन्न दोहों के चौथे-चौथे चरण हैं। दोहे के चौथे चरण में ग्यारह मात्राएँ होती हैं पर यहाँ १२-१२ हैं। मात्राएँ ग्यारह ही रहें इसलिए 'गोपाल' के 'गो' को 'गु' करके तथा 'देवावहु' के 'दे' को 'दि' करके पढ़ा जाता है।

अन्त में आता है तो उसका 'त्' दूसरे, तीसरे या चौथे पाद के प्रथमाक्षर से संयुक्त होकर 'रि' को गुरु बना देगा। यदि वह चौथे पाद के अन्त में आता है तो वहाँ 'रि' गुरु नहीं मानी जायगी, लघु ही रहेगी, जैसे, यदि किसी पद्य का ऐसा चौथा पाद हो

वरसो, भर दो, नद सरसी सरित्।

इसमें सोलह मात्राएँ हैं। आठ-आठ पर यति है। अन्त के तीन अक्षर (त् हल होने के कारण नहीं गिना जायगा) क्रमशः गुरु, लघु और लघु हैं। जिसमें यह लक्षण मिले वह डिल्ला नामक मात्रिक छन्द होता है। अब यदि 'त्' के कारण 'रि' को दीर्घत्व प्राप्त हो जायगा तो यहाँ डिल्ला छन्द बनने में बाधा होगी। जहाँ म् हल हो, उसके पूर्व का लघु गुरु हो सकता है, क्योंकि म् अनुस्वार में बदल जाता है। अतः अनुस्वारयुक्त होने से लघु वर्ण को गुरुत्व प्राप्त हो जाता है। इस विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह धारणा कि लघु वर्ण के पीछे यदि कोई हल् हो तो वह लघु वर्ण गुरु हो जाता है,

समझने-समझाने के लिए छन्दःशास्त्र के पण्डितों ने गणों की कल्पना की है। उन्होंने वर्ण छन्दों में तीन-तीन अक्षरों का एक गण माना है। गणों के नाम निम्नलिखित हैं—

मगण, नगण, भगण, यगण, रगण, जगण, सगण और तगण।

इनके साथ दो अक्षर ग और ल और जोड़ दिये जाते हैं जो गुरु लघु के वाचक हैं। छन्दःशास्त्र के इन दस अक्षरों में समग्र वाङ्मय का समावेश हो जाता है। इन्हें पिंगल के दस अक्षर कहा जाता है।

यदि तीनों अक्षर गुरु (ऽऽऽ) हों तो मगण होता है। यदि तीनों अक्षर लघु (।।।) हों तो नगण होता है। यदि पहला अक्षर गुरु और अन्तिम दो लघु (ऽ।।) हों तो भगण होता है। यदि पहला अक्षर लघु हो और अन्तिम दो गुरु (।ऽऽ) हों तो यगण होता है। यदि पहला अक्षर गुरु, दूसरा लघु, और तीसरा फिर गुरु (ऽ।ऽ) हो तो रगण होता है। यदि पहिला अक्षर लघु, दूसरा गुरु, तीसरा फिर लघु (।ऽ।) हो तो जगण होता है। यदि पहले दो लघु और तीसरा गुरु ।।ऽ) हो तो सगण होता है। यदि पहले दो गुरु और तीसरा लघु (ऽऽ।) हो तो तगण होता है।

कारण तो म् का अनुस्वार बन जाना है। प्रश्न यह है कि 'अभवत्' में 'व' गुरु है या नहीं? भानु कवि जी के अनुसार उसे गुरु होना चाहिए, क्योंकि वह हल् सेपहले पड़ा है। पर हम समझते हैं कि उसकी तीन ही मात्राएँ हैं, चार नहीं। अच्छा होता, यदि इस धारणा को मानने वाले अपनी धारणा की पुष्टि में किसी प्रमाण को उद्धृत करते।

छन्दःशास्त्र में इन्हें मगण, नगण, भगण, इत्यादि कहने के स्थान पर केवल पूर्व-पूर्व अक्षर से कह दिया जाता है, जैसे म, न, भ इत्यादि।

सैद्धान्तिक रूप से हमने ऊपर विवेचना कर तो दिया है पर वास्तविक रूप में देखें तो कहना पड़ेगा कि हिन्दी भाषा की ऐसी प्रकृति ही नहीं कि वह हलन्त शब्दों का प्रयोग करे। हिन्दी के कवि प्रायः हलन्त संस्कृत शब्दों को अदन्त बनाकर लिखते हैं, जैसे भगवन को भगवन। निम्नलिखित उदाहरण देखिए—

सब साधन से रहे समुन्नत, भगवन देश हमारा।

यह अट्ठाईस मात्राओं के सार छन्द का चरण है जिसमें भगवन् को भगवन लिखा गया है।

नीचे हम ऐसी तालिका देते हैं जिससे गणों के नाम, लक्षण, चिह्न और उदाहरण जाने जा सकते हैं।

नाम	अक्षर	लक्षण	चिह्न	उदाहरण
मगण	म	सर्व गुरु	SSS	माता का
नगण	न	सर्व लघु	|||	कमल
भगण	भ	आदि गुरु	S||	रावण
यगण	य	आदि लघु	|SS	कबीरा
रगण	र	मध्य लघु	S|S	जानता
जगण	ज	मध्य गुरु	|S|	रमेश
सगण	स	अन्त गुरु	||S	कमला
तगण	त	अन्त लघु	SS|	योगेश
लघु	ल	अकेला लघु			ल
गुरु	ग	अकेला गुरु	S	गो

विशेष—यह आवश्यक नहीं कि एक गण में एक शब्द या पद पूरा हो जाय। कहीं एक गण में शब्द या पद पूरा हो भी जाता है कहीं नहीं भी पूरा होता जैसे—दिवस का अवसान समीप था।

इस पद में दिवस। का अव। सानस। मीप था। इसमें क्रमशः नगण, भगण, भगण और रगण हैं। पहला शब्द पूरा है बाकी एक-दूसरे के साथ मिले हुए हैं।

गणों के लक्षण सुगमता से याद रखने के लिए छन्दःशास्त्रियों ने कई सूत्र या पद्य बनाये हुए हैं। एक सूत्र यह है—

यमाताराजभानसलगं।

इसमें प्रथम आठ अक्षर तो गणों के नाम हैं अन्त में लघु और

में लघु हो वह यगण, गुरु जिसके मध्य में हो वह जगण, लघु जिसके मध्य में हो वह रगण, गुरु जिसके अन्त में हो वह सगण और लघु जिसके अन्त में हो वह तगण होता है।

मात्रिक गण

मात्रिक गण चार-चार मात्राओं का होता है। चार-चार मात्रा वाले मात्रिक गणों के पाँच रूप होते हैं। पहले रूप में दो गुरु (SS), दूसरे में दो लघु एक गुरु (IIS), तीसरे में एक लघु एक गुरु फिर एक लघु (ISI), चौथे में एक गुरु और दो लघु (SII), और पाँचवें में चारों लघु (IIII) होते हैं। इन्हें चतुष्कल या चौकल कहते हैं क्योंकि इनमें चार-चार कला अर्थात् मात्राएँ हैं।

तीन-तीन वर्ण वाले वर्ण-गणों के जिस प्रकार नाम रक्खे हुए हैं वैसे ही चार-चार मात्रा वाले इन मात्रिक गणों के भी प्राचीन छन्दःशास्त्रियों ने नाम रक्खे हैं परन्तु वह नाम व्यवहार में नहीं आते। ऊपर जो पाँच मात्रिक गण बताये हैं उनमें से ये तीन रूप तो IIS, ISI और SII क्रमशः वर्णिक गणों के सगण, जगण और भगण के समान ही हैं। अतः छन्दःशास्त्र के पण्डित उन्हीं नामों से इन गणों का भी नाम लेकर काम चला लेते हैं।

वैसे छन्दःशास्त्र की पुस्तकों में इन गणों के ये नाम दिये हुए हैं– कर्ण (SS), करतल (IIS), मुरारि, या पयोध (ISI), वसु, या चरण (SII), और विप्र या द्विज (IIII)।

नीचे हम एक तालिका देते हैं जिससे इन गणों का स्वरूप लक्षण, उदाहरण और नाम स्पष्ट हो जायँगे।

स्वरूप	लक्षण	उदाहरण	नाम
S S	सर्वगुरु	माता	कर्ण
I I S	अन्तगुरु	रजनी	करतल
I S I	मध्यगुरु	कुणाल	मुरारि, पयोध
S I I	आदिगुरु	पालक	वसु, चरण
I I I I	सर्वलघु	नरपति	विप्र, द्विज

यह चतुष्कल प्रायः आर्या छन्द में व्यवहृत होते हैं।
मात्रा को कल के अतिरिक्त मत्ता और मत्त भी कहते हैं।[1]

---

[1] वास्तव में हमने यहाँ मात्रिक गणों के सारे भेद नहीं लिखे हमने केवल डगण नामक मात्रिक गण के पाँच उपभेद लिखे हैं जिन्हें जिज्ञासा हो वे मात्रिक गणों के टगण, ठगण, डगण, ढगण णगण गणों को छन्दःप्रभाकर में देखें।

मात्रिक छन्द और वर्णिक छन्द पहचानने की रीति

मान लीजिए आपके मन में जिज्ञासा पैदा होती है कि निम्नलिखित पद्य में मात्रिक छन्द है या वर्णिक।

	मात्रा	वर्ण
उच्छ्वास और आँसू में	१४	८
विश्राम थका सोता है।	१४	८
रोई आँखों में निद्रा	१४	७
बनकर सपना होता है।	१४	१०

यह उदाहरण मात्रिक सम छन्द का है क्योंकि इसके चारों चरणों में मात्राओं की संख्या तो समान है परन्तु वर्णों का क्रम चारों पादों का एक समान नहीं।

अब वर्णवृत को लीजिए

	वर्ण
अपने हिमबिन्दु बचे तब भी,	१२
चलता उनको धरता-धरता।	१२
गड़ जायँ न कण्टक भूतल के,	१२
कर डाल रहा डरता-डरता।	१२

(मैथिलीशरण गुप्त)

यह वर्णवृत का उदाहरण है। इसके चारों चरणों में वर्ण संख्या और वर्णक्रम समान हैं। प्रत्येक पाद में चार-चार सगण हैं अतः यह वर्णिक छन्द है।

सारांश यह है कि मात्रिक छन्द के चारों पादों में मात्रा संख्या तो समान होती है पर चारों पादों में गुरु लघु का स्थान नियत नहीं होता। वहाँ तो मात्राओं की गिनती पूरी करनी होती है। वर्णिक वृत्तों में वर्णसंख्या चारों पादों में समान होने के साथ-ही-साथ वर्णक्रम—अर्थात् गुरु लघु अक्षर का स्थान—भी समान होता है।

वर्णिक और मात्रिक छन्द का भेदक लक्षण वर्णक्रम का एक में होना और एक में न होना ही है। ध्यान रहे वर्णछन्द में मात्रासंख्या समान होगी, परन्तु मात्राछन्द में वर्णसंख्या समान नहीं होगी। यदि किसी मात्रिक पद्य में वर्णसंख्या समान हो भी जाय (जैसे उभय छन्द में) तो वर्णक्रम समान नहीं होगा। वर्णक्रम जहाँ समान हो गया वहाँ वह पद्य वर्णवृत्त बन जायगा, मात्रिक नहीं रहेगा।[1]

छन्दों में मात्रा और गण लगाने की रीति

जिस पद्य की मात्राएँ गिननी हों उसके चारों पादों को इस तरह से लिखो कि पहले, दूसरे, तीसरे और चौथे चरण के अक्षरों में पर्याप्त अवकाश रहे। फिर लघु अक्षरों के ऊपर लघु का चिह्न और गुरु अक्षरों के ऊपर गुरु का चिह्न लगाते जाओ। गुरु की दो-दो मात्राएँ और लघु की एक-एक मात्रा गिनकर प्रत्येक पाद के अन्त में योग कर दो। इस प्रकार यह विदित हो जायगा कि अमुक पद्य कितनी मात्राओं का है। उदाहरण देखिए।

। । । । S । । S ।	
सुरभित मन्द बयार	११ मात्रा
। । S । । । । S ।	
सरसे सुमन सुढार।	११ ,,
S । । S । । S ।	
गूँज रहे मधुकार	११ ,,
S । । S । । S ।	
धन्य वसन्त बहार॥	११ ,,

[1]स्मरण रहे कि ये नियम सम मात्रिकछन्द और समवृत्तों में ही पूर्णरूप से घटते हैं। अर्धसम मात्रिक छन्दों और अर्धसमवृत्तों में पहले-तीसरे तथा दूसरे-चौथे पादों में घटते हैं। विषम छन्दों तथा वृत्तों की चाल ही निराली है।

गण लगाने की रीति

प्रत्येक पाद पर पहले की तरह गुरु और लघु के चिह्न लगाओ फिर तीन-तीन अक्षरों के ऊपर एक रेखा खींच दो जिससे वे तीन-तीन अक्षर एक-एक गण बनाते चलें। रेखा के ऊपर गण का नाम लिख दो यदि एक या दो अक्षर बच जायँ तो वे गुरु हों तो ग, लघु हों तो ल लिख दें, दोनों गुरु हों तो ग, ग लिख दें, दोनों लघु हों तो ल, ल।

उदाहरण देखिए—

त भ ज ज ग ग

ऽ ऽ । ऽ । । । ऽ । । ऽ । ऽ ऽ

आँखों अ नू पछ वि है जि स नेवि लो की

त भ ज ज ग ग

ऽ ऽ । ऽ । । । ऽ । । ऽ । ऽ ऽ

वंशी-नि नादम न दे जि स ने सु ना है।

त भ ज ज ग ग

ऽ ऽ । ऽ । । । ऽ । । ऽ । ऽ ऽ

देखा त्रि हा र इ स या मि नि मेंजि न्हों ने

त भ ज ज ग ग

ऽ ऽ । ऽ । । । ऽ । । ऽ । ऽ ऽ

कैसेमु कुंदउ नकेउ रसेक ढ़ेंगे॥

(तीसरे पाद में 'जिन्होंने' पद में 'जि' लघु है, क्योंकि 'न्हों' संयुक्त वर्ण होने पर भी 'जि' पर बल नहीं डालता। बोलने में 'जिनोंने' ऐसा कहा जाता है।)

यह चौदह वर्णों का वसंत तिलका छन्द है।

मात्रिक और वर्णिक छन्दों के भेद

मात्रिक और वर्णिक छन्द तीन प्रकार के होते हैं :

सम, अर्धसम और विषम

जिसके चारों पाद एक समान हों अर्थात् मात्राओं की संख्या एक जैसी हो अथवा वर्णिक क्रम और संख्या एक समान हो उसे सम छन्द कहते हैं।

जिसमें पहला पाद तीसरे के साथ और दूसरा चौथे के साथ मिलता हो उस छन्द को अर्धसम कहते हैं।

जिसमें न सम का और न अर्धसम का लक्षण मिलता हो उसे विषम छन्द कहते हैं। इस भेद में ऐसे सभी पद्य आ जाएँगे कि (१) जिनके चारों पाद एक दूसरे से भिन्न हो सकते हैं अथवा (२) पहला दूसरे के साथ और तीसरा चौथे पाद के समान हो सकता है अथवा (३) दो चरण आपस में मिलते हों शेष दो एक दूसरे से भिन्न हों। वे सब पद्य भी इसी विषम छन्द के अन्तर्गत आ जाते हैं जिनके पाद चार से न्यून या अधिक हों।

अब हम नीचे क्रमशः उनके उदाहरण देते हैं—

सम मात्रिक छन्द का उदाहरण—

	मात्रा	
उडाती है तू घर में कीच,	१६	
नीच ही होते हैं बस नीच।	१६	
हमारे आपस के व्यवहार,	१६	
कहाँ से समझे तू अनुदार।	१६	(साकेत)

इसके चारों पादों में मात्रा संख्या समान है। यह शृंगार नामक सम मात्रिक छन्द है।

मात्रिक अर्धसम का उदाहरण—

अरी सुरभि जा, लौट जा,
अपने अंग सहेज।
तू है फूलों में पली,
यह काँटों की सेज॥

इसके पहले और तीसरे तथा दूसरे और चौथे पाद परस्पर समान हैं। विषम पादों में अर्थात् पहले और तीसरे में १३-१३ तथा दूसरे और चौथे में ११-११ मात्राएँ हैं।

मात्रिक विषम छन्द का उदाहरण—

रहिये लटपट काट दिन, वरु घामें माँ सोय।
छाँह न वाकी वैठिए, जो तरु पतरो होय॥
जो तरु पतरो होय, एक दिन धोखा दैहै।
जा दिन वहै बयार, टूटि तव जर से जैहै॥
कह गिरधर कविराय, छाँह मोटे की गहिये।
पत्ता सव झरि जाय, तऊ छाया में रहिये॥

इस पद्य में चार से अधिक पाद हैं अतः यह विषम छन्द है।

वर्णिक सम छन्द का उदाहरण

	वर्ण
मैं जो नया ग्रन्थ विलोकता हूँ	११
भाता मुझे सो नव मित्र सा है।	११
देखूँ उसे मैं नित बार-बार	११
मानो मिला मित्र मुझे पुराना॥	११

इसके चारों पादों में वर्ण क्रम और वर्ण संख्या समान है। यह इन्द्रवज्रा छन्द है।

(१) चान्द्र (२) पाक्षिक (३) राम (४) वैदिक (५) याज्ञिक (६) रागी (७) लौकिक (८) वासव (९) अंक (१०) दैशिक (११) रौद्र (१२) आदित्य (१३) भागवत (१४) मानव (१५) तैथिक (१६) संस्कारी (१८) महासंस्कारी (१८) पौराणिक (१९) महापौराणिक (२०) महादैशिक (२१) त्रैलोक (२२) महारौद्र (२३) रौद्रार्क (२४) अवतारी (२५) महावतारी (२६) महाभागवत (२७) नाक्षत्रिक (२८) यौगिक (२९) महायौगिक (३०) महातैथिक (३२) अश्वावतारी (३२) लाक्षणिक।

ये सब नाम मात्राओं की संख्याओं के अनुसार रक्खे हुए हैं। जैसे, जिसमें १८ मात्राएँ हों उसे पौराणिक जाति कहेंगे, क्योंकि पुराण १८ हैं, जिसमें चार मात्राएँ हों वह वैदिक जाति कहलायगी क्योंकि वेद चार हैं।

दण्डक

जिन पद्यों के एक-एक पाद में ३२ मात्राओं से अधिक मात्राएँ हों वे मात्रिक दण्डक होते हैं।

नीचे दिये हुए वंशवृक्ष से ये भेद स्पष्ट हो जायँगे :
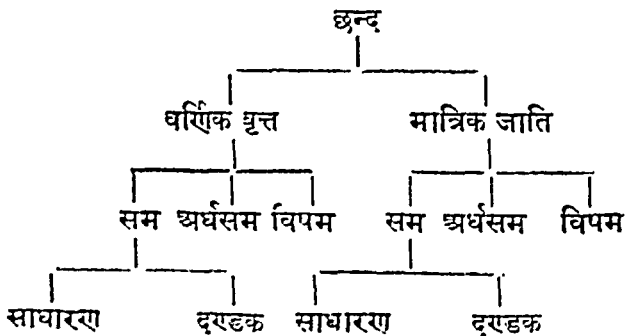
दूसरा अध्याय

वर्णिक छन्द प्रकरण

पिछले अध्याय में हमने वर्णवृत्तों के सम अर्धसम और विषम नामक जो तीन भेद बतलाये हैं इस अध्याय में हम क्रमशः उनके लक्षण और उदाहरण लिखेंगे।

एक से सात अक्षरों तक के छन्दों के लक्षण और उदाहरण हमने छोड़ दिये हैं, क्योंकि अल्पाक्षर होने के कारण उनका प्रयोग बहुत कम होता है। हम आठ अक्षर वाले छन्द तथा उससे आगे के छन्दों के लक्षण और उदाहरण यहाँ दे रहे हैं। जैसे पहले कहा है, एक-एक जाति में कई उपभेद हो सकते हैं, पर हमने मुख्य-मुख्य उपभेदों को ही लिया है। किसी जाति के जितने उपभेद हो सकते हैं हमने उसके सामने कोष्ठक में वे दे दिये हैं।

अनुष्टुम् जाति

आठ अक्षरों वाले छन्द (२५६)

अनुष्टुभ् अथवा श्लोक

इस छन्द के प्रत्येक पाद में आठ अक्षर होते हैं। ५वाँ अक्षर लघु होता है और छठा अक्षर गुरु। दूसरे और चौथे पाद में सातवाँ अक्षर भी लघु होता है।

उदाहरण—

सखी ने अंक में खींचा,
दुःखिनी पड़ सो रही।
स्वप्न में हँसती थी हा!
सखी थी देख रो रही। (साकेत)

शान्ति नहीं तो, जीवन क्या[1] है ?
कान्ति नहीं तो, यौवन क्या है ?
प्रेम नहीं तो, आदर क्या है ?
प्यास नहीं तो, सागर क्या है ? (रामनरेश त्रिपाठी)

त्रिष्टुप् जाति

ग्यारह अक्षरों के छन्द (२०४८)

शालिनी

मा ता ता गा गा युता 'शालिनी' है। (यति ४, ७)

इस छन्द में मगण, तगण, तगण और दो गुरु के क्रम से ग्यारह अक्षर होते हैं, जैसे—

कैसी-कैसी, ठोकरें खा रहा है।
तीखी पीड़ा, चित्त में पा रहा है।
तो भी प्यारे, हाल तेरा वही है।
विद्वानों की, पद्धति क्या यही है। (छन्दःशिक्षा)

या

क्या-क्या होगा साथ, मैं क्या बताऊँ ?
है ही क्या, हा, आज जो मैं जताऊँ ?
तो भी तूली, पुस्तिका और वीणा,
चौथी मैं हूँ, पाँचवीं तू प्रवीणा। (साकेत)

दोधक

दोधक तीन भकार गुरु दो।

दोधक छन्द में तीन भगण और दो गुरु के क्रम से ग्यारह अक्षर होते हैं। जैसे—

---

1. 'क्या' का पूर्वाक्षर पर दबाव नहीं पड़ता।

(क) मैं जग में सबते बड़भागी।
देह दशा तव कारण लागी।
जो बहु भाँतिन वेदन गायो।
रूप सु मैं अवलोकन पायो।

अथवा

(ख) पांडव की प्रतिमा सम लेखो
अर्जुन भीम महामति देखो।
है सुभगा सम दीपति पूरी
सिन्दुर औ तिलकावलि रूरी।

अथवा

(ग) आरत की प्रभु आरति टारौ
दीन अनाथन को प्रभु पारौ।
थावर जंगम जीव जु कोऊ।
संमुख होत कृतारथ सोऊ। (रामचन्द्रिका)

स्वागता

स्वागता रनभगैर्गुरुणा च।

स्वागता छन्द में रगण, नगण, भगण और दो गुरु के क्रम से ग्यारह अक्षर होते हैं। जैसे—

(क) राज पुत्रिकनि सों छवि छाये
राजराज सब डेरहि आये।
हीर चीर गज वाजि लुटाए
सुन्दरीन बहु मंगल गाए।

अथवा

(ख) देखि राम वरषा ऋतु आई।
रोम रोम बहुधा दुखदाई।

अथवा

(ख) धिक तथापि हो मानते गहे ?
तुम अलक्ष्य-से क्यों यहाँ रहे ?
जिधर पीठ दे दीठ फेरती,
उधर मैं तुम्हें[1] दीठ हेरती !

अथवा

(ग) बिगड़ता नहीं न्याय भी दया
बन रहो प्रिये, आन मैं गया।
तुम अधीर हो तुच्छ ताप में
रह सकी नहीं आप आप में।

अथवा

(घ) धिक प्रतीति भी की न नाथ की,
पर न भी सखी, बात हाथ की।
प्रतिविधान मैं क्या करूँ बता,
इस अनर्थ का भी कहीं पता !

(साकेत)

इन्द्रवज्रा

हो इन्द्रवज्रा ततजा ग गा सों।

इन्द्रवज्रा छन्द में तगण, तगण, जगण और दो गुरु के क्रम से ग्यारह अक्षर होते हैं। जैसे—

मैं जो नया ग्रन्थ विलोकता हूँ,
भाता मुझे सो नव मित्र-सा है।

---

[1]पूर्वाक्षर पर दबाव नहीं डालता।

देखूँ उसे मैं नित वार-वार,
मानों मिला मित्र मुझे पुराना। (गिरिधरशर्मा)

या

संसार है एक अरण्य भारी।
हुए जहाँ हैं हम मार्गचारी॥
जो कर्मरूपी न कुठार होगा।
तो कौन निष्कंटक पार होगा॥(मैथिलीशरण गुप्त)

उपेन्द्रवज्रा

उपेन्द्रवज्रा जतजा ग गा सों।

उपेन्द्रवज्रा छन्द में जगण, तगण जगण और दो गुरु के क्रम से ग्यारह अक्षर होते हैं। जैसे—

(क) यथार्थ था सो सपना हुआ है।
अलीक था जो अपना हुआ है॥
रही यहाँ केवल है कहानी।
सुना वही एक नई पुरानी॥

अथवा

(ख) मिलाप था दूर अभी धनी का।
विलाप ही था बस का बनी का॥
अपूर्व आलाप वही हमारा।
यथा विपंची-दिर दार दारा॥ (साकेत)

या

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देव देव॥

उपेन्द्रवज्रा अरु इन्द्रवज्रा, दोनों मिलें हैं उपजाति जानो।

उपजाति छन्द में कुछ चरण इन्द्रवज्रा के और कुछ चरण उपेन्द्रवज्रा के होते हैं। दोनों के संयोग से चौदह प्रकार के उपजाति बनते हैं।

परोपकारी बन वीर त्यागो।
सोते पड़े भारत को उठाओ॥
हे मित्र, त्यागो मद मोह माया।
नहीं रहेगी यह नित्य काया॥ (रामनरेश त्रिपाठी)

इस पद्य में आदि और अन्त के पाद उपेन्द्रवज्रा के हैं, बीच के दो पाद इन्द्रवज्रा के हैं।

दूसरा उदाहरण —

श्रीमान धीमान वही मनस्वी।
वही सुसम्पन्न वही यशस्वी॥
परोपकारी नर-रत्न जो है।
स्वर्गीय है जीवन-मुक्त सो है॥ (छन्दःशिक्षा)

इस पद्य के आदि और अन्त के चरणों में इन्द्रवज्रा का, और बीच के दो चरणों में उपेन्द्रवज्रा का लक्षण घटता है।

अलख की बात अलख जानें।
समक्ष को ही हम क्यों न मानें॥
रहे वही प्लावित प्रीति धारा।
आदर्श ही ईश्वर है हमारा॥ (साकेत)

इसके प्रथम तीन पाद उपेन्द्रवज्रा के तथा चौथा पाद इन्द्रवज्रा का है।

इस तरह कहीं एक या एक से तीन तक पंक्तियाँ इन्द्रवज्रा की या उपेन्द्रवज्रा की होने से छन्द का नाम उपजाति हो जाता है।

जगती जाति

वारह अक्षरों के छन्द (भेद ४०९६)

भुजंग प्रयात

'भुजंगप्रयाता' बने चार या सों।

इसमें चार यगण होते हैं। जैसे—

(क) अरी व्यर्थ है व्यंजनों की बड़ाई।
हटा थाल, तू क्यों इसे आप लाई॥
वही पाक है, जो विना भूख भावे।
बता किन्तु तू ही, उसे कौन खावे॥

अथवा

(ख) बनाती रसोई सभी को खिलाती।
इसी काम में आज मैं तृप्ति पाती॥
रहा किन्तु मेरे लिये एक रोना।
खिलाऊँ किसे मैं अलोंना-सलोंना॥ (साकेत)

प्रमिताक्षरा

प्रमिताक्षरा सजससा विलसै।

इस छन्द में सगण, जगण, सगण और सगण होते हैं। जैसे—

शपथ है उपचार न कीजियो।
अवधि की सुध ही तुम लीजियो॥ (साकेत)

अथवा

दिवस का अवसान समीप था,
गगन था कुछ लोहित हो चला।
तरु शिखा पर थी अब राजती,
कमलिनी - कुल - वल्लभ की प्रभा। (प्रियप्रवास)

अथवा

विफल जीवन व्यर्थ बहा, बहा,
सरस दो पद भी न हुए हहा।
कठिन है कविते, तव भूमि ही,
पर यहां श्रम भी सुख-सा रहा॥

अथवा

इतरपापफलानि यथेच्छया
वितर तानि सहे चतुरानन।
अरसिकेषु कवित्वनिवेदनम्
शिरसि मा लिख मा लिख मालिख।

मोदक

चार भकार रचौ तुम 'मोदक'।

मोदक छन्द में चार भकार (S||) होते हैं। जैसे—

हो निज देश-सुधार सखा, तब।
उन्नति के कुछ काम करो जब।
केवल हैं उपदेश वृथा सब।
भूख मिटे मन-मोदक से कब।

(छंदरत्नावली)

अथवा

अच्युतं केशव रामनारायणम्.
कृष्ण दामोदरं वासुदेवं हरिम्.
श्रीधरं माधवं गोपिकावल्लभम्।
जानकीनायकं रामचन्द्रं भजे।

इन्द्रवंशा

है इन्द्रवंशा ततजार शोभिनी।

इन्द्रवंशा छन्द में तगण, तगण (SSI), जगण, ISI और रगण (SIS) के क्रम से १२ अक्षर होते हैं। जैसे—

यों ही घड़ा हेतु हुए बिना कहीं
होते बड़े लोग कठोर यों नहीं।
वे हेतु भी यों रहते सुगुप्त हैं
ज्यों अद्रि अम्भोनिधि में प्रलुप्त हैं। (छन्दःशिक्षा)

अथवा

आये जबै सीय समेत राम हैं।
छाये महा मंगल औध धाम हैं।
भ्राता भरत्थादि करैं प्रनाम हैं।
याचा किये पूरित सर्व काम हैं।

(छन्दरत्नावली)

वंशस्थ

लसै सु 'वंशस्थ' जता जरा शुभा।

वंशस्थ छन्द में जगण, तगण जगण और रगण के क्रम से १२ अक्षर होते हैं। जैसे—

(क) घड़े लिये कामिनी औ' कुमारियाँ,
अनेक कूपों पर थीं सुशोभिता ।
पधारती जो जल ले स्व-गेह थीं ।
बजा बजा के निज नूपुरादि को ।

अथवा

(ख) तजा किसी ने जल से भरा घड़ा
उसे किसी ने शिर से गिरा दिया ।
समस्त दौड़ीं सुधि गात की गँवा
सरोज-सा सुन्दर श्याम[1] देखने

अथवा

(ग) हरीतिमा का सुविशाल-सिंधु सा
मनोज्ञता की रमणीय भूमि सा ।
विचित्रता का शुभ-सिद्ध-पीठ सा
प्रशान्त-वृन्दावन दर्शनीय था ।

(प्रियप्रवास)

माधव

वंशस्थ और इन्द्रवंशा के संयोग से जो छन्द बनता है उसे 'माधव' कहते हैं। जैसे—

दया मया छू जिसको नहीं गई ।—
पाषाण जी का नर क्रूर निर्दयी ।

[1] पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता ।

हैं ढोर ही पुच्छ-विषाण हीन हैं।
है भार भू का खल दीन हीन हैं॥ (छन्दःशिक्षा

इस पद्य का प्रथम पाद वंशस्थ वृत्त का है, बाकी के तीन इ
वंशा के हैं। इस प्रकार दो छन्दों के मिश्रण से बना हुआ यह मा
नाम का उपजाति छन्द है।

मोतियदाम

जकारचतुष्टय 'मोतियदाम'।

'मोतियदाम' छन्द में चार जगण होते हैं। जैसे—

(क) गये तहँ राम, जहाँ निज मात।
कही यह बात कि हौं बन जात॥
कछू जनि जी दुख, पावहु माइ।
सु देहु असीस मिलौं फिरि आइ॥

अथवा

(ख) रहौ चुप ह्वै सुत क्यों[1] बन जाहु
न देखि सकैं तिनकें उर दाहु।
लगी अब बाय तुम्हारे[1] बाय।
करें उलटी बिधि क्यों[1] कहि जाय।
(रामचन्द्रिका)

---

[1] संयुक्त होने पर भी पूर्व वर्ण को गुरु नहीं करता।

जलोद्धतगति

कहैं जसजसा जलोद्धतगती ।

जलोद्धतगति छन्द में जगण, सगण, जगण और सगण के क्रम से १२ अक्षर होते हैं । जैसे—

असार जग को, ससार समझो,
प्रपंच लख के उदास मत हो ।
डिगो न, विचलो चलो सँभल के,
प्रसन्न मन से स्वधर्म पथ में ।

(छन्दःशिक्षा)

अति जगती जाति

तेरह वर्ण के छन्द (भेद ८१९२)

तारक

ससि सीस गहे स्वइ तारक भारी

तारक छन्द में सगण, सगण, सगण, सगण और एक गुरु के क्रम से तेरह अक्षर होते हैं, जैसे—

(क) अति गाजत वाजत दुन्दुभि मानो
निरघात सबै पविपात बखानो ।
धनु है यह गौरमदाइन नाहीं
सरजाल बहै जलधार वृथाहीं ॥

या

(ख) घनघोर घने दसहू दिस छाये
मघवा जनु सूरज पै चढ़ि आये।
अपराध विना छिति के तन ताये
तिन पीडन पीडित हो उठि धाये॥

या

(ग) हम बानर हैं रघुनाथ पठाये
तिनकी तरुणी अवलोकन आये।
इति मोहि महामति भीतर जैये
तरुणी हि हते कवलौं सुख पैये॥ (रामचन्द्रिका)

मञ्जुभाषिणी

स ज सा ज गा भनत मञ्जुभाषिणी।

इस छन्द में सगण, जगण, सगण, जगण और एक गुरु के क्रम से तेरह वर्ण होते हैं। जैसे—

चुप बैठे राम शुभ नाम लीजिए,
गुण से अतीत गुणगान कीजिए।
मत धाम दाम पर चित्त दीजिए।
तजि मोह-जाल हरि-भक्ति भीजिए। (छन्दःशिक्षा)

राधा

'रा त मा या गा' सजावैं छन्द 'राधा' को।

रगण, तगण, मगण, यगण और एक गुरु के क्रम से राधा छन्द बनता है। जैसे—

भूल जाता जो दिए को पुण्य सो पाता,
डूब जाता है उसी का, जो फिरे गाता।
मातृ भाषा मातृ-भू से है जिसे नाता।
धन्य है वो गण्य है वो मान्य है भ्राता। (छन्दःशिक्षा)

——: o :——

शक्करी जाति

चौदह अक्षरों के छन्द (भेद १६३८४)

वसन्ततिलका

जानौ 'वसन्ततिलका' 'त भ जा ज गा गा'

वसन्ततिलका छन्द में तगण, भगण, जगण, जगण और दो गुरु के क्रम से चौदह अक्षर होते हैं। जैसे—

ओहो! मरा वह वराक वसन्त कैसा?
ऊँचा गला रुँध गया अब अन्त जैसा।
देखो, बढ़ा ज्वर, जरा-जड़ता जगी है।
लो, ऊर्ध्व साँस उसकी चलने लगी है। (साकेत)

अथवा

(क) थे दीखते परम वृद्ध नितान्त रोगी।
या थी नवागत वधू गृह में दिखाती।

कोई न और इनको तज के कहीं था।
सूने पड़े सदन गोकुल के सभी थे।

अथवा

(क) नाना प्रसंग उठते जन-संघ में थे।
जो थे सशंकित महा करते सबों को।
था सूखता अधर औ' कँपता कलेजा।
चिन्ता-अपार चित में चिनगी लगाती।

अथवा

(ख) आँखों अनूप छवि है जिसने विलोकी
वंशी-निनाद मन दे जिसने सुना है।
देखा विहार इस यामिनि में जिन्होंने
कैसे मुकुन्द उनके उर से कढ़ेंगे।

अथवा

(ग) रोना महा-अशुभ जान पयान-बेला
आँसू न ढाल सकती निज नेत्र से थी।
रोये बिना न छन भी मन मानता था।
डूबी महान द्विविधा[1] जन-मण्डली थी।

(प्रियप्रवास)

---

[1] पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता।

अथवा

नाना पुराण निगमागम सम्मतं यद्
रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि।
स्वान्तस्सुखाय तुलसी रघुनाथ गाथा—
भाषानिबन्धमति मंजुल मातनोति। (तुलसी)

मुकुन्द

सोहै 'मुकुन्द' 'तभजाजगला' सुछन्द।

मुकुन्द छन्द में तगण, भगण, जगण, जगण गुरु और लघु के क्रम से चौदह अक्षर होते हैं। जैसे—

फूली लवङ्ग लवली लतिका विलोल,
भूले जहाँ भ्रमर विभ्रम मत्त ढोल।
बोलैं सुहंस शुक कोकिल केकिराज,
मानों वसंतभट बोलत युद्धकाज। (छन्दःशिक्षा)

अथवा

सन्तुष्ट आक पर नित्य रहो सहर्ष,
हे ग्रीष्म सन्तत करो, उसका प्रकर्ष।
है कौन हेतु पर हो, कर जो कराल
हो नष्ट भ्रष्ट[1] करते, तुम ये तमाल।
(छन्द रत्नावली)

---

[1]. पूर्व वर्ण को गुरु नहीं बनाता।

अति शक्करी जाति

पन्द्रह वर्णों के छन्द (भेद ३२७६८)

मालिनी

'न न म यय' गणों से मालिनी छन्द होता।

मालिनी छन्द में नगण, नगण, मगण, यगण और यगण क्रम से पन्द्रह अक्षर होते हैं। जैसे—

(क) यह सकल दिशायें आज रो-सी रही हैं।
यह सदन हमारा है हमें काट खाता।
मन उचट रहा है चैन पाता नहीं है।
विजन-विपिन में है भागता सा दिखाता।

अथवा

(ख) मनहरण हमारे प्रात जाने न पावें।
सखि, जुगुत हमें तो सूझती है न ऐसी।
पर यदि यह काली यामिनी ही न बीते।
तब फिर [1]ब्रज कैसे [1]प्राणप्यारे तजेंगे।

अथवा

(ग) सखि, मुख अब तारे क्यों छिपाने लगे हैं।
वह दुख लखने की ताब क्या हैं न लाते।
परम-विफल होके आपदा टालने में।
वह मुख अपना हैं लाज से या छिपाते।

---

[1]. पूर्ववर्ण को गुरु नहीं करता।

अथवा

(घ) सब समझ गई मैं काल की क्रूरता को।
पल-पल यह मेरा है कलेजा कँपाता।
अब नभ उगलेगा आग का एक गोला।
सकल व्रज[1]-धरा को फूँक देता जलाता।
(प्रियप्रवास)

अथवा

(क) सखि, विहग, उड़ा दे, हों सभी मुक्तिमानी,
सुन शठ शुकवाणी—'हाय रूठो न रानी।
खग, जनकपुरी की व्याह दूँ सारिका मैं ?
तदपि यह वहीं की त्यक्त हूँ दारिका मैं।

अथवा

(ख) कह विहग, कहाँ हैं आज आचार्य तेरे ?
विकच वदन वाले वे कृती कान्त मेरे ?
सचमुच 'मृगया में' ? तो अहेरी नये वे।
यह हत हरिणी क्यों छोड़ यों ही गये वे।

अथवा

(ग) टप-टप गिरते थे अश्रु नीचे निशा में।
झड़-झड़ पड़ते थे तुच्छ तारे दिशा में।

[1] पूर्व वर्ण को गुरु नहीं बनाता।

कर पटक रही थी निम्नगा-पीट छाती।
सन-सन करके थी शून्य की साँस आती।

(साकेत)

चामर

राज-राज रेफ सो लसै सुचारु चामरम्।

चामर छन्द में रगण, जगण, रगण, जगण और रगण के क्रम से पन्द्रह अक्षर होते हैं। जैसे—

कुञ्ज में गुपाल लाल राधिका विराज हीं।
वृन्द गोपिकान के सुराग-रङ्ग साज हीं।
नृत्य में उमङ्ग सङ्ग बीन वेनु वाज हीं।
लच्छरी विलोकि दच्छ अच्छरी सु लाज हीं।

(छन्द-रत्नावली)

अथवा

(क) देखि-देखि कै अशोक राजपुत्रिका कह्यौ[1]।
देहि मोहि आगि तैं जु अंग आगि [1]ह्वै रह्यौ[1]।
ठौर पाइ बात-पुत्र डारि मुद्रिका दई।
आस-पास देखि कै उठाय हाथ कै लई।

अथवा

(ख) मत्त दन्तिराज राजि वाजिराज राजि कै।
हेम हीर मुक्त चीर चारु साज साजि कै।

---

[1] पूर्ववर्ण को गुरु नहीं करता।

वेष-वेष वाहिनी असेष वस्तु सोधियो ।
दायजो विदेहराज भाति-भाँति को दियो ।

अथवा

(ग) वस्त्र-भौन स्यों[1] वितान आसने बिछावने ।
अस्त्र-सस्त्र अंगत्रान[1] भाजनादि को गने ।
दासि-दास वासि-वास रोम पाट को कियो ।
दायजो विदेहराज भाँति-भाँति को दियो ।

अथवा

(घ) आइयो कुरंग एक चारु हेम हीर को ।
जानकी समेत चित्त मोहि राम वीर को ।
राजपुत्रिका समीप साधु बन्धु राखि के ।
हाथ चाप वाण ले गये गिरीश नाँखि के ।
(रामचन्द्रिका)

निशिपालिका छन्द

भोज सुनि राघवहिं घोस निसिपाल है ।

निशिपालिका छन्द में भगण, जगण, सगण, नगण और रगण म से १५ अक्षर होते हैं । जैसे—

(क) गान बिन मान बिन हास बिन जीवहीं ।
तप्त नहिं खाय जल सीत नहिं पीवहीं ।

---
[1] पूर्वाक्षर पर दबाव नहीं डालता ।

तेल तजि खेल तजि खाट तजि सोवहीं।
सीत जल न्हाय[1] नहिं उष्ण जल जोवहीं।

अथवा

(ख) वानर न जानु सुर जानु सुभगाथ हैं।
मानुष न जानु रघुनाथ जगन्नाथ हैं।
जानकि हि देहु करि नेहु कुल देह सों।
आजु रण साजि पुनि गाजि हँसि मेह सों।

अथवा

(ग) शोच अति पोच उर मोच दुख दानिये।
मातु यह बात अवदात मम मानिये।
रैनिचर छद्म बहु भाँति अभिलाष हीं।
दीन स्वर[1] राम कबहूँ न मुख भाषहीं।
(रामचन्द्रिका)

अष्टि जाति

सोलह अक्षरों के छन्द (भेद ६५५३६)

पञ्चचामर—

जरा-जरा जगा कहैं कवीन्द्र पञ्चचामरम्।

पञ्चचामर छन्द में जगण, रगण, जगण, रगण, जगण और एक गुरु के क्रम से सोलह अक्षर होते हैं। जैसे—

---

[1] पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता।

महेश के महत्व का विवेक बार-बार हो।
अखण्ड एक तत्व का अनेकधा विचार हो।
बिगाड़ से समाज के प्रबन्ध का सुधार हो।
प्रवीण-पञ्चराज के प्रपञ्च का प्रचार हो।

(छन्दःशिक्षा)

अथवा

उसी उदार की कथा सरस्वती बखानती।
उसी उदार से धरा कृतार्थ भाव मानती।
उसी उदार की सदा सजीव कीर्ति कूजती।
तथा उसी उदार को समस्त सृष्टि पूजती।

(मैथिलीशरण गुप्त)

अथवा

(क) न हौं रहौं न जाँद जू विदेह-धाम को अबै।
कही जु बात मातु पै सु आजु मैं सुनी सबै।
लगै छुधाहि माँ भली विपत्ति माँझ नारिये।
पियास-त्रास[1] नीर वीर युद्ध में सँभारिये।

अथवा

(ख) पढ़ौ विरंचि मौन वेद जीव सोर छंडि रे।
कुबेर बेर कै कही न यक्ष भीर मंडि रे।

[1] पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता।

अथवा

(ग) तारे डूबे तम टल गया छा गई व्योम-लाली ।
पंछी बोले तमचुर जगे ज्योति फैली दिशा में ।
शाखा डोली सकल-तरु की कंज फूले सरों में ।
धीरे-धीरे दिनकर कढ़े तामसी रात बीती ।

अथवा

(घ) संकोची है परम अति ही धीर है लाल मेरा ।
लज्जा होती अमित उसको माँगने में सदा थी ।
जैसे लेके स-रुचि सुत को अंक में मैं खिलाती ।
हा ! वैसे ही अब नित खिला कौन वामा सकेगी ।

अथवा

(ङ) जो मैं कोई विहग उड़ता, देखती व्योम में हूँ ।
तो उत्कण्ठा विवश चित में आज भी सोचती हूँ ।
होते मेरे निबल तन में पक्ष जो पक्षियों से ।
तो यों ही मैं समुद उड़ती श्याम के पास जाती ।

(प्रियप्रवास)

शिखरिणी (यति ६, १७)

कवीन्द्रों को मोहै यमनसभला गा शिखरिणी ।

खरिणी छन्द में यगण, मगण, नगण, सगण, भगण, लघु और

गुरु के क्रम से सत्रह अक्षर होते हैं। छठे और सत्रहवें अक्षर पर यति होती है। जैसे—

अनूठी-आभा से सरस-सुषमा से सुरस से।
बना जो देती थी बहु-गुणमयी भू-विपिन को।
निराले फूलों की विविध-दल-वाली अनुपमा।
जड़ी बूटी नाना बहु-फलवती थीं विलसती।
(प्रियप्रवास)

अथवा

छटा कैसी प्यारी, प्रकृति-तिय के चन्द्रमुख की,
नया नीला ओढ़े, वसन चटकीला गगन का।
जरी-सल्मा-रूपी, जिस पर सितारे सब जड़े।
गले में स्वर्गङ्गा, अतिललित माला सम पड़ी।
(छन्दःशिक्षा)

पिऊँ ला, खाऊँ ला, सखि, पहन लूँ ला, सब करूँ,
जिऊँ मैं जैसे हो, यह अवधि का अर्णव तरूँ।
कहे जो, मानूँ सो, किस विध बता, धीरज धरूँ?
अरी, कैसे भी तो पकड़ प्रिय के वे पद मरूँ। (साकेत)

अथवा

मिली मैं स्वामी से, पर कह सकी क्या सँभल के।
बहे आँसू हो के, सखि! सब उपालम्भ गल के।

अथवा

न जा उधर हे सखी, वह शिखी सुखी हो नचे,
न संकुचित हो कहीं, मुदित लास्य-लीला रचे।
बनूँ न पर विघ्न मैं, बस मुझे अबाधा यही,
विराग-अनुराग में अहह! इष्ट एकान्त ही। (साकेत)

धृति जाति

अठारह अक्षरों के छन्द (भेद २६२१४४)

चञ्चरी (यति ८, १८)

चञ्चरी रसजाजभार कवीन्द्र लोग कहा करैं।

चञ्चरी छन्द में रगण, सगण, जगण, जगण, भगण और रगण के क्रम से अठारह अक्षर होते हैं। यति आठवें अक्षर और अठारहवें अक्षर पर होती है। जैसे—

(क) व्योम में मुनि देखिये अति लाल श्री मुख साजहीं,
सिन्धु में बड़वाग्नि की जनु ज्वालमाल विराजहीं।
पद्मरागनि की किधौं दिवि धूरि पूरित-सी भई।
सूर-बाजिन की खुरी अति तिक्तता तिनकी हई।

अथवा

(ख) सेतु सीतहिं शोभना दरसाय पंचवटी गये।
पाँय लागि अगस्त के पुनि अत्रियौ तु बिदा भये।
चित्रकूट बिलोकि के तब ही प्रयाग बिलोकियो।
भारद्वाज बसैं जहाँ जिनते न पावन है बियो।

अथवा

(ग) लंक लाय दियो जरी हनुमन्त मन्मथ गाइयो,
सिंधु बाँधन सोधि कै नल छीर छींट बहाइयो।
ताहि तोहि समेत अन्य उखारि हौं उलटौं धरौं।
आजु राज करौ विभीषण बैठिहैं तिहि ते डरौ।

(रामचन्द्रिका)

अतिधृति जाति

उन्नीस अक्षरों के छन्द (भेद ५२४२८८)

शार्दूलविक्रीडित (यति १२, १९)

जा में हो मस जा सता तग वही शार्दूलविक्रीडिता।

जिस छन्द में मगण, सगण, जगण, सगण, तगण, तगण और एक गुरु हो, उसे शार्दूलविक्रीडित छन्द कहते हैं। इसके बारहवें अक्षर पर और पादांत पर यति होती है। जैसे—

सींचें ही बस मालिनें, कलश ले, कोई न ले कत्तरी।
शाखी फूल फलें यथेच्छ बढ़के, फैलें लताएँ हरी।
क्रीड़ा-कानन-शैल यन्त्र-जल से संसिक्त होता रहे।
मेरे जीवन का, चलो सखि, वहीं सोता भिगोता बहे।

(साकेत)

अथवा

आ बैठी उर मोह जन्य जड़ता विद्या विदा हो गई।
पाई कायरता मलीन मन की हा! वीरता खो गई।
जागी दीन दशा दरिद्रपन की श्री सम्पदा सो गई।
माया शंकर की हँसाय हमको रुद्रा बनी रो गई।

(छन्दःशिक्षा)

अथवा

(क) जैसे हो लघु वेदना हृदय की औ दूर होवे व्यथा।
पावें शान्ति समस्त लोग न जलें मेरे वियोगाग्नि में।
ऐसे ही वर-ज्ञान[1] तात व्रज[1] को देना वताना क्रिया।
माता का सविशेष तोष करना औ वृद्ध-गोपेश का।

अथवा

(ख) प्रातः काल अपूर्व-यान मँगवा औ साथ ले सारथी।
ऊधो गोकुल को चले सदय हो स्नेहाम्बु से भीगते।
वे आए जिस काल कान्त-व्रज[1] में देखा महामुग्ध हो।
श्री वृन्दावन की मनोज्ञ-मधुरा श्यामायमाना मही।

अथवा

(ग) आते ही मुख-म्लान[1] देख हरि का वे दीर्घ-उत्कण्ठ हो।
बोले क्यों इतने मलीन प्रभु[1] हैं ? है वेदना कौनसी ?
फूले-पुष्प-विमोहिनी विकचता क्या हो गई आपकी,
क्यों है नीरसता प्रसार करती उत्फुल्ल अंभोज में।

(प्रियप्रवास)

कृति जाति

बीस अक्षरों के छन्द (भेद १०४८५७६)

गीतिका (१२-२०)

सज जाभ रास लगा, महामति शेष गावहिं गीतिका।

गीतिका छन्द में सगण, दो जगण, भगण, रगण, सगण, लघु और

---

[1] पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता।

गुरु के क्रम से बीस अक्षर होते हैं। इसके बारहवें तथा बीसवें अक्षर पर यति होती है। जैसे—

सज जीभ री ! सु लगै मुहीं सुन, मो कहा चित लाय कै।
नय काल लक्खन जानकी सह, राम को नित गायकै।
पद मो शरीरहिं राम के कल, धाम को लय धावहू।
कर, बीन लै अति दीन ह्वै[1] नित, गीति कान सुनावहू।
(छन्दःप्रभाकर)

प्रकृति जाति

इक्कीस वर्णों के छन्द (भेद २०९७१५२)

स्रग्धरा (यति ७, १४, २१)

मा रा भा ना य या या, कविवर सुखदा, स्रग्धरा छंदरानी।

स्रग्धरा छन्द में मगण, रगण, भगण, नगण और तीन यगणों के क्रम से इक्कीस अक्षर होते हैं। सातवें, चौदहवें और इक्कीसवें अक्षर पर यति होती है। जैसे—

(क) लाई है क्षीर क्यों[1] तू ? हठ मत कर यों, मैं पियूँगी न आली,
मैं हूँ क्या हाय ! कोई शिशु सफल हठी, रङ्क भी राज्यशाली ?
माना तूने मुझे है तरुण विरहिणी, वीर के साथ ब्याहा[1];
आँखों का नीर ही क्या कम फिर मुझको ? चाहिए और क्या हा[1] !

अथवा

(ख) रोती हैं और दूनी निरख कर मुझे दीन-सी तीन साँसें,
होते हैं देवर श्रीहत, हत बहनें छोड़ती हैं उसासें।

---

[1] पूर्वाक्षर को गुरु नहीं बनाता।

आली, तू ही बता दे, इस विजन बिना मैं कहाँ आज जाऊँ ?
दीना, हीना, अधीना ठहरकर जहाँ शान्ति दूँ और पाऊँ ?
(साकेत)

अथवा

नाना फूलों-फलों से, अनुपम जग की वाटिका है विचित्रा।
भोक्ता हैं सैंकड़ों ही, मधुप शुक तथा कोकिला गानशीला।
कौवे भी हैं अनेकों, परधन हरने में सदा अग्रगामी।
कोई है एक माली, सुधि इन सब की जो सदा ले रहा है।
(छन्द-रत्नावली)

आकृति जाति

बाईस अक्षरों के छन्द (भेद ४१६४३०४)

बाईस अक्षरों से लेकर छब्बीस अक्षरों तक के छन्दों को सामान्यतया 'सवैया' कह देते हैं। हम यहाँ मुख्य-मुख्य ही सवैया छन्दों का उल्लेख करेंगे।

मदिरा

सात भकार गकार जबै तब पिङ्गलवेदि कहैं मदिरा।

मदिरा छन्द में सात भकार और एक गुरु के क्रम से बाईस अक्षर होते हैं। जैसे—

(क) चेटक सो धनु संग कियो, तन रावण के अति ही बलु हो।
बाण समेत रहे पचिकै तहँ जा सँग पै न तजो[1] थलु हो।

---

[1] तज्यौ।

प्रात-पयाण[1] कथा सुनके उसके मुख-पंकज का मुरझाना।
और जरा हँस के उसका अपने मन का वह भाव छिपाना।
किन्तु अचानक ही उसके वर लोचन में जल का भर आना।
सम्भव है न कभी मुझको इस जीवन में वह दृश्य भुलाना।

अथवा

हो रहते तुम नाथ जहाँ रहता मन साथ सदैव वहीं है।
मंजुल मूर्ति बसी उर में वह नेक कभी टलती न कहीं है।
लोलुप लोचन को दिखती वह चारु छटा सब काल यहीं है।
है वह योग मिला हमको जिसमें दुख-मूल वियोग नहीं है।

(गोपालशरणसिंह)

अथवा

धूर भरे अति सोभित [2]स्यामजु तैसि बनी सिर सुन्दर चोटी।
खेलत खात फिरैं अँगना पग पैंजनि बाजत पीरि कछोटी।
वा छवि को 'रसखान' विलोकत वारत काम कला निज कोटी।
काग के[3] भाग बड़े सजनी हरि-हाथ सों[3] ले गयो[3] माखन रोटी।

(रसखान)

अथवा

कण्ठ कुठार परै अब हार कि, फूल असोक कि सोक समूरो।
कै चितसारि चढ़ै कि चिता तन चन्दन चर्चि कि पावक पूरो।

---

[1] प्रयाण।

[2] यहाँ संयुक्त होने पर भी पिछले अक्षर पर जोर नहीं पड़ता।

[3] लघुवत् पढ़ें।

(२) अब जितनी मात्राओं के छंद का नष्ट रूप पूछा गया है उतनी मात्राओं के भेदों की पूर्ण संख्या में से नष्ट रूप की संख्या को घटा दो। हमने छः मात्राओं की जाति का ८वाँ रूप जानना है। छः मात्राओं के भेदों की पूर्ण सख्या १३ होती है। अतः हम १३ में से ८ घटा देंगे। शेष बचेंगे ५।

(३) अब यह देखेंगे कि लघुचिह्नों के ऊपर हमने जो अंक लगाए हैं, दाहिनी ओर से उनमें से कौन-कौन सा अंक ५ से घट सकता है। जो अंक घट जाए उसके नीचे गुरु लगाइए, जो न घटे उसके नीचे लघु लगाइए। इस तरह तब तक करते जाइए जब तक शेषांक पूरा न घट जाए। ५ में से १३ और ८ घट नहीं सकते अतः उनके नीचे लघु-लघु लगे। उसके अनंतर ५ का अंक है। ५ का अंक ५ से घट गया अतः वहाँ गुरु लगा। शेष कुछ न बचा। ३, २, और १ के अंक के नीचे लघु लगे, क्योंकि ये घट नहीं सके—५ अंक ५ से घटकर शून्य हो गया था। इस तरह यह रूप बना :

१	२	३	५	८	१३
।	।	।	।	।	।
।	।	।	ऽ	।	।

(४) अब आप ऐसा कीजिए कि गुरु चिह्न के आगे जहाँ-जहाँ लघु चिह्न पड़े उस लघु चिह्न को मिटा दीजिए (गुरु से अगला केवल एक-एक लघु चिह्न मिटाना है)। हमने गुरु चिह्न के आगे का एक लघु चिह्न मिटा दिया। जैसे :

१	२	३	५	८	१३
।	।	।	।	।	।
।	।	।	ऽ	।	।

अब यह रूप । । । ऽ । छः मात्राओं के छंद का ८वाँ रूप निकल आया है। देखिए पीछे छः मात्राओं के प्रस्तार को। प्रस्तार का लम्बा-चौड़ा झगड़ा किए बिना ही हमें छः मात्राओं के छंद का ८वाँ रूप ज्ञात हो गया है।

लगाना है कि यह उस जाति का कौनसा रूप है। इसे हम उद्दिष्ट रूप कहेंगे। आप इस उद्दिष्ट रूप को पहले लिख लीजिए।

S S S । । । S

(२) फिर बाईं ओर से क्रमशः इन चिह्नों के ऊपर एक से लेकर दुगुने-दुगुने अंक लिख लीजिए—

१	२	४	८	१६	३२	६४
S	S	S	।	।	।	S

(३) अब लघुचिह्नों के ऊपर जो अंक हैं उन्हें जोड़कर उसमें एक और मिला दीजिए। जो योगफल आये वह उद्दिष्ट रूप की संख्या होगी। लघुचिह्नों के ऊपर ८+१६+३२ हैं। इनको जोड़ने से ५६ बना। एक बीच में और जोड़ दिया गया। ५७ योगफल हो गया। यही उत्तर है। अर्थात् यह रूप S S S । । । S ७ वर्णों की जाति का ५७ वाँ रूप है। अब पीछे उष्णिक् जाति का प्रस्तार देख लीजिए।

मात्रिक उद्दिष्ट की रीति

उद्दिष्ट रूप को आप पहले लिख लीजिए।

। । । S । ।

(२) अब यह देखिए कि एक से लेकर सात मात्राओं तक के छंद में प्रत्येक के कितने रूप होते हैं, अर्थात् अब यहाँ संख्या प्रत्यय की सहायता से एक-एक चिह्न के ऊपर उस-उसके जितने रूप बन सकते हों उनको बाईं ओर से उद्दिष्ट रूप के ऊपर इस तरह से लिखिये कि वे गुरु चिह्न के तो ऊपर और नीचे दोनों तरफ आवें और लघु-चिह्न के केवल ऊपर ही आवें। ७ मात्राओं के छन्द की संख्या क्रमशः यह होगी १ २ ३ ५ ८ १३ २१। इन अंकों को उपरिलिखित प्रकार से उद्दिष्ट रूप पर क्रमशः बाईं ओर से लिखने पर यह रूप बन जाएगा:

१	२	३	५	१३	२१
।	।	।	S	।	।
			८		

परिशिष्ट १

छात्रों के अभ्यास के लिये हम नीचे कुछ प्रश्न लिखते हैं।

(१) निम्नलिखित पद्यों में बतलाइए कौन-कौनसा छन्द है :

(क) सुत सहज-सनेहों का समाधार-सा है?
सदय हृदय है औ सिन्धु-सौजन्य का है।
परम सरल है औ शिष्ट है शान्त-धी है,
वह बहुविनीयी है मूर्त्ति-आत्मीयता है।

(ख) तुम सम मृदु-भाषी धीर-सद्बंधु-ज्ञानी,
उस गुणमय का है दिव्य सम्वाद लाया।
पर मुझ दुखदग्धा भाग्य-हीना-महा की
यह दुखमय दोषा वैसि ही है स-दोषा।

(ग) मेरे प्यारे स-कुशल सुखी और सानन्द तो हैं?
कोई चिन्ता मलिन उनको तो नहीं है बनाती?
ऊधो छाती वदन पर है म्लानता भी नहीं तो?
हो जाती है हृदयतल में तो नहीं वेदनायें?

(घ) मीठे-मेवे मृदुल नवनी और पक्वान्न नाना।
धीरे प्यारों-सहित सुत को कौन होगी खिलाती।
प्रातः पीता सु-पय कजरी गाय का चाव से था।
हा! पाता है न अब उसको प्राण-प्यारा हमारा।

(ङ) परम-आदर-पूर्वक प्रेम से,
विपुल-बात वियोगी-व्यथा-हरी।
हरिसखा कहते इस काल थे,
बहुदुखी अ-सुखी ब्रज-भूप से॥

(च) निज मथित-कलेजे को करों साथ थामे,
कुछ समय यशोदा ने सुनी सर्व बातें।
फिर वहु-विमना हो व्यग्र हो कम्पिता हो,
निज-सुअन-सखा से यों व्यथा-साथ बोलीं।

(छ) आवेगों से विपुल-विकला शीर्णकाया कृशांगी
चिन्ता-दग्धा व्यथित-हृदया शुष्क-ओष्ठा अधीरा।
आसीना थीं निकट पति के अम्बुनेत्रा यशोदा,
खिन्ना दीना विनत-वदना मोह-मग्ना मलीना।

(ज) व्रजधराधिप मौन-निकेत भी,
वन रहा अधिकाधिक-शांत था।
तिमिर भी उसके प्रति-भाग में,
स्व-विभुता करता विधि-बद्ध था।

(झ) जो राज-पंथ वन मेदिनि में बना था।
धीरे उसी पर सधा रथ जा रहा था।
हो हो विमुग्ध लखते सह-सारथी थे।
ऊधो छटा विपिन की अति ही-अनूठी।

(ञ) सरोवरों की सुषमा स-कंजता,
सु-मेरु औ निर्भर आदि रम्यता।
न थी यथातथ्य उन्हें विमोहती,
अनन्त-सौन्दर्यमयी वनस्थली।

(ट) कलित-किरण-माला, विम्ब-सौन्दर्य-शाली।
सु-गगन तल-शोभी दिव्य-छाया पती का।
छविमय करती थी दर्शकों के दृगों के।
जब रवितनया ले अंक में क्रीड़ती थी।

(ठ) एकाकी व्रजदेव एक दिन थे, बैठे हुए सद्म में।
उत्सन्ना-व्रजभूमि के स्मरण से उद्विग्नता थी बड़ी।

ऊधो-संज्ञक-ज्ञान-वृद्ध उनके जो एक सन्मित्र थे ।
वे आये इस काल ही सदन में आनन्द में मग्न से ।

(ड) जो राधा वृष-भानु-भूप-तनया स्वर्गीय दिव्यांगना ।
शोभा है व्रज-प्रान्त की अवनि की स्त्री जाति की वंश की ।
होगी हा ! वह देवि मग्न अति ही मेरे वियोगाब्धि में ।
जो हो संभव तात पोत बनके तो त्राण देना उसे ।

(ढ) ऐसे सारी व्रज-अवनि के एक ही लाड़िले को ।
छीना कैसे किस कुटिल ने क्यों कहाँ कौन बेला ।
हा ! क्यों घोला गरल उसने स्निग्धकारी रसों में ।
कैसे छींटा सरस कुसुमोद्यान में कंटकों को ॥

(ण) पहुँचते जब थे गृह में किसी,
व्रज लला हँसते मृदु बोलते ।
ग्रहण थीं करती अति चाव से,
तब उन्हें सब सद्मनिवासिनी ।

(त) काले कुत्सित कीट का कुसुम में कोई नहीं काम था ।
कांटे से कमनीयता कमल में क्या है न कोई कभी ।
दंडों में कब ईख के विपुलता है ग्रंथियों की भली ।
हा ! दुर्दैव प्रगल्भते ! अपटुता तू ने कहाँ की नहीं ।

(थ) यदपि नृपति ने है प्यार ही से बुलाया,
पर कुशल हमें तो है न होती दिखाती ।
प्रिय विरह घटायें घेरती आ रही हैं,
घहर घहर देखो हैं कलेजा कंपाती ।

(द) जो अन्य-ग्राम ढिग गोकुल ग्राम के थे ।
प्राणी अनेक उन ग्राम समस्त के भी ।
डूबे अपार-दुख-सागर में सवामा ।
आ के खड़े निकट नन्द-निकेत के थे ।

(च) निज मथित-कलेजे को करों साथ थामे,
कुछ समय यशोदा ने सुनी सर्व बातें।
फिर बहु-विमना हो व्यग्र हो कम्पिता हो,
निज-सुअन-सखा से यों व्यथा-साथ बोलीं।

(छ) आवेगों से विपुल-विकला शीर्णकाया कृशांगी
चिन्ता-दग्धा व्यथित-हृदया शुष्क-ओष्ठा अधीरा
आसीना थीं निकट पति के अम्बुनेत्रा यशोदा
खिन्ना दीना विनत-वदना मोह-मग्ना मलीना

(ज) व्रजधराधिप मौन-निकेत भी,
बन रहा अधिकाधिक-शांत था।
तिमिर भी उसके प्रति-भाग में,
स्व-विभुता करता विधि-बद्ध था।

(झ) जो राज-पंथ वन मेदिनि में बना था।
धीरे उसी पर सधा रथ जा रहा था।
हो हो विमुग्ध लखते सह-सारथी थे।
ऊधो छटा विपिन की अति ही-अनूठी।

(ञ) सरोवरों की सुषमा स-कंजता,
सु-मेरु औ निर्झर आदि रम्यता।
न थी यथातथ्य उन्हें विमोहती,
अनन्त-सौन्दर्यमयी वनस्थली ।

(ट) कलित-किरण-माला, बिम्ब-सौन्दर्य-शाली।
सु-गगन तल-शोभी दिव्य-छाया पती का।
छविमय करती थी दर्शकों के दृगों के।
जब रवितनया ले अंक में क्रीड़ती थी।

ऊधो-संज्ञक-ज्ञान-वृद्ध उनके जो एक सन्मित्र थे।
वे आये इस काल ही सदन में आनन्द में मग्न से।

(ड) जो राधा वृष-भानु-भूप-तनया स्वर्गीय दिव्यांगना।
शोभा है व्रज-प्रान्त की अवनि की स्त्री जाति की वंश की।
होगी हा! वह देवि मग्न अति ही मेरे वियोगाब्धि में।
जो हो संभव तात पोत बनके तो त्राण देना उसे।

(ढ) ऐसे सारी व्रज-अवनि के एक ही लाड़िले को।
छीना कैसे किस कुटिल ने क्यों कहाँ कौन वेला।
हा! क्यों बोला गरल उसने स्निग्धकारी रसों में।
कैसे छींटा सरस कुसुमोद्यान में कंटकों को॥

(ण) पहुँचते जब थे गृह में किसी,
व्रज लला हँसते मृदु बोलते।
ग्रहण थीं करती अति चाव से,
तब उन्हें सब सद्मनिवासिनी।

(त) काले कुत्सित कीट का कुसुम में कोई नहीं काम था।
कांटे से कमनीयता कमल में क्या है न कोई कभी।
दंडों में कब ईख के विपुलता है ग्रंथियों की भली।
हा! दुर्दैव प्रगल्भते! अपटुता तू ने कहाँ की नहीं।

(थ) यदपि नृपति ने है प्यार ही से बुलाया,
पर कुशल हमें तो है न होती दिखाती।
प्रिय विरह घटायें घेरती आ रही हैं,
घहर घहर देखो हैं कलेजा कंपाती।

(द) जो अन्य-ग्राम ढिग गोकुल ग्राम के थे।
प्राणी अनेक उन ग्राम समस्त के भी।
डूबे अपार-दुख-सागर में सबामा।
आ के खड़े निकट नन्द-निकेत के थे।

(ध) जो भीड़ आलय-समीप ब्रजेश के थी,
सो कातरा बहु बनी भय-कंस से थी।
संचालिता विषमता करती उसे थी;
संताप की विविध-संशय की दुखों की।

(न) जब हुआ ब्रज जीवन जन्म था,
ब्रज प्रफुल्लित था कितना हुआ।
उमगती कितनी नँदरानि थीं,
पुलकता कितना चित नन्द था।

(प) अनूठी-आभा से सरस-सुषमा से सुरस से,
बना जो देती थी बहुगुणमयी भू-विपिन को।
निराले-फूलों की विविध-दल-वाली अनुपमा।
जड़ी बूटी नाना बहु-फलवती थीं विलसती।

(फ) सुकूल-वाली कलि-कालिमापहा,
विचित्र-लीला-मयि वीचि-संकुला।
विराजमाना वन एक ओर थी,
कलामयी केलिवती-कलिन्दजा।

(ब) यों ही प्रबोध करते पुर-वासियों का,
नाना-कथा परम-शान्ति-करी सुनाते।
आये ब्रजाधिप-निकेतन पास ऊधो,
पूरा प्रसार करती करुणा जहाँ थी।

(भ) मुकुंद आते जब थे अरण्य में,
प्रफुल्ल हो तो करते विहार थे।
विलोकते थे सु विलास वारि का,
कलिन्दजा के कल कूल पै खड़े।

(म) स-मोद बैठे गिरि-सानु पै कभी,
अनेक थे सुन्दर-दृश्य देखते।

वने महा-उत्सुक वे कभी छटा,
विलोकते निर्झर-नीर की रहे॥

(य) कथन यों करते व्रज की व्यथा,
गगन-मण्डल लोहित हो गया।
इस लिये बुध-ऊधव को लिये,
सकल-गोप गये निज-गेह को।

(र) धीरे धीरे दिवस यह भी व्यग्रता-धाम बीते।
लोगों द्वारा यह शुभ-समाचार आया गृहों में।
सारी सेना निहत अरि की हो गई श्याम हाथों।
प्राणों को ले मगध-अवनी-नाथ उद्विग्न भागा।

(ल) पादांक पूत अयि धूलि प्रशंसनीया,
मैं बाँधती समुद अंचल में तुझे हूँ।
होगी मुझे सतत तू बहु-शान्ति-दाता,
देगी प्रकाश तम में तिरते दृगों को।

(व) मेरे हो तुम बंधु विज्ञ-वर हो आनन्द की मूर्त्ति हो।
क्यों मैं जा व्रज में सका न अबलौं हो जानते भी इसे।
कैसी हैं अनुरागिनी हृदय से माता, पिता, गोपिका।
प्यारे है यह भी छिपी न तुम से जाओ अतः प्रात ही।

(श) ज्यों ज्यों थी रजनी व्यतीत करती औ' देखती व्योम को।
त्यों ही त्यों उनका प्रगाढ़ दुख भी दुर्दान्त था हो रहा।
आँखों से अविराम अश्रु बह के था शान्ति देता नहीं।
बारम्बार असक्त-कृष्ण-जननी थीं मूर्छिता हो रहीं।

(ष) समय था सुनसान निशीथ का,
अटल भूतल में तम-राज्य था।
प्रलय-काल समान प्रसुप्त हो,
प्रकृति निश्चल, नीरव, शांत थी।

(स) बहु-ध्वनि करुणा की फैल-सी क्यों गई है,
तरु-गन मन मारे आज क्यों यों खड़े हैं।
अवनि अति-दुखी सी क्यों हमें है दिखाती,
नभ-पर दुख-छाया-पात क्यों हो रहा है।

(ह) प्रसून यों ही न मिलिंद-वृन्द को,
विमोहता औ करता प्रलुब्ध है।
वरच प्यारा उसका सुगंध ही,
उसे बनाता बहु-प्रीति-पात्र है।

(क्ष) निज मनोहर-भाषण वृद्ध ने,
जब समाप्त किया बहु-मुग्ध हो।
अपर एक प्रतिष्ठित गोप यों,
तब लगा कहने सु गुणावली।

(त्र) समाप्त ज्यों ही इस यूथ ने किया,
अतीव प्यारे अपने प्रसंग को।
लगा सुनाने उस काल ही उन्हें,
स्वकीय बातें फिर अन्य गोप यों।

(ज्ञ) कान्तार में सरिततीर सुगह्वरों में,
सोते-अनेक बहते जल-स्वच्छ के थे।
होती अजस्र उनमें ध्वनि थी अनूठी।।
वे थे मनों शरद की कल-कीर्त्ति गाते।।

विशेष : प्रश्न १ के सारे पद्य 'प्रिय-प्रवास' से लिये गये हैं।

(२) बतलाइए निम्नलिखित पद्यों में से कौन-से मात्रिक छन्द के हैं और कौन-से वर्णिक वृत्त के? छन्दों का नाम-निर्देश भी कीजिए।

(क) हे देवो, यह नियम सृष्टि में सदा अटल है,
रह सकता है वही सुरक्षित, जिसमें बल है।
निर्बल का है नहीं जगत में कहीं ठिकाना,
रक्षा-साधन उसे प्राप्त हों चाहे नाना। (छन्दःशिक्षा)

(ख) कालीदह में तू क्यों कूदा, डाँटा तो हँस बोला,
तू कहती थी और चुराना, तू मक्खन का गोला।
छींके पर रख छोड़ेंगे सब, अब भिड़-भरा मठोला
निकल उड़ीं वे भिड़ें प्रथम ही, भाग बचा मैं भोला।
(छन्दःशिक्षा)

(ग) तू मङ्गला मङ्गलकारिणी है,
सद्भक्त के धाम विहारिणी है।
माता! सदा पूर्ण पिता समेता,
कीजै हमारे चित में निकेता।
(छन्दःशिक्षा)

(घ) राम गये जब ते वन माहीं,
राकस वैर करैं बहुधा हीं।
रामकुमार हमैं नृप दीजै।
तौ परिपूरन यज्ञ करीजै।
(रामचन्द्रिका)

(ङ) नहिं सतसंग जोग जपु जागा।
नहिं दृढ़ कमल-चरन अनुरागा।
एक बानि करुनानिधान की।
सो प्रिय जाके गति न आन की।
(तुलसी)

(च) साधु भक्तों में सुयोगी, संयमी बढ़ने लगे।
सभ्यता की सीढ़ियों पै, सूरमा चढ़ने लगे।
वेदमंत्रों को विवेकी, प्रेम से पढ़ने लगे।
वञ्चकों की छातियों में, शूल से गड़ने लगे।
(छन्दःशिक्षा)

(छ) मन जाहि राचेउ मिलिहि सो बरु सहज सुन्दर साँवरो।
करुनानिधानु सुजानु सील सनेहु जानत रावरो।

प्रश्न १ (प) शिखरिणी
,, ,, (फ) वंशस्थ
,, ,, (ब) वसन्त तिलका छन्द
,, ,, (भ) वंशस्थ
,, ,, (म) ,,
,, ,, (य) द्रुतविलम्बित
,, ,, (र) मंदाक्रांता
,, ,, (ल) वसंत तिलका छन्द
,, ,, (व) मन्दाक्रांता छन्द
,, ,, (श) शार्दूल विक्रीडित छन्द
,, ,, (ष) द्रुतविलंबित
,, ,, (स) मालिनी छन्द
,, ,, (ह) वंशस्थ
,, ,, (क्ष) द्रुतविलंबित
,, ,, (त्र) वंशस्थ छन्द
,, ,, (ज्ञ) वसंत तिलका

प्रश्न २ (क) मात्रिक छन्द, रोला।
,, ,, (ख) मात्रिक छन्द, मार।
,, ,, (ग) वर्णिक छन्द, इन्द्रवज्रा।
,, ,, (घ) वर्णिक छन्द, दोधक।
,, ,, (ङ) मात्रिक छन्द, चौपाई।
,, ,, (च) मात्रिक छन्द, गीतिका।
,, ,, (छ) मात्रिक छन्द, हरिगीतिका।
,, ,, (ज) मात्रिक छन्द, ताटङ्क।
,, ,, (झ) मात्रिक छन्द, चवपैया
,, ,, (ञ) ,, ,, दोहा।
,, ,, (ट) ,, ,, ,,